THE VICE-CHAIRMAN (SHRI DATTA MEGHE): This will be taken up later. The House is adjourned for lunch till 2.30 P.M.

The House then adjourned for lunch at forty-five minutes past twelve of the clock

The House re-assembled after lunch at thirty minutes past two of the clock

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI KALRAJ MISHRA) in the Chair.

PRIVATE MEMBERS' RESOLUTION

Requiring Supreme Court and High Courts not to declare any legislation as null and void and striking down the same unless declared so unanimously by a stipulated majority of judges respectively (*Contd.*)

डा॰ प्रभा ठाकुर (राजस्थान): उपसभाध्यक्ष जी, गत् 18 अगस्त को राज्य सभा के माननीय सदस्य श्री शान्ताराम लक्ष्मण नायक द्वारा सदन में जो संकल्प उपस्थित किया गया था, उस पर मैं अपने विचार रख रही थी और उसी क्रम में, क्योंकि काफी कुछ तो मैं तब कह चुकी थी, इस विषय में अपने विचार प्रस्तुत कर चुकी थी, उसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए, उनके संकल्प के समर्थन के साथ मैं अपनी बात आरम्भ करती हूं।

महोदय, उनका यह संकल्प बहुत ही महत्वपूर्ण संकल्प है, जिसमें यह कहा गया है कि ''संसद द्वारा पारित कोई भी विधान भारत के उच्चतम न्यायालय या किसी उच्च न्यायालय द्वारा सिवाय उस स्थिति के जब उच्चतम न्यायालय के मामले में उसके सात न्यायाधीशों से अन्यून न्यायाधीशों की न्यायपीठ और उच्च न्यायालयों के मामले में उसके पांच न्यायाधीशों से अन्यून न्यायाधीशों की न्यायपीठ सर्वसम्मति से किसी ऐसे निर्णय की घोषणा करे, अन्यथा संसद द्वारा पारित किसी भी विधान को अकृत और शून्य घोषित नहीं किया जाएगा और उसे रद्द नहीं किया जाएगा'' क्योंकि अभी हाल ही में सीलिंग वाले मामले में संसद में जो संकल्प पारित हुआ, विधान पारित हुआ, उसकी जिस तरह से उपेक्षा की गई तथा और भी कुछ मामलों में जब ऐसा दिखाई दिया तब यह आवश्यकता हुई कि सदन में इस तरह का संकल्प लाया जाए, इस तरह की चर्चा की जाए।

महोदय, यह एक बहुत अहम, नाजुक, लेकिन विचारणीय सवाल है, स्थिति है, जिस पर चर्चा करना और उससे कोई निष्कर्ष निकाला जाना आवश्यक है। महोदय, हर पद की अपनी एक गरिमा है, महत्व है, अपना कार्यक्षेत्र है और मर्यादा है। यदि आज इस सदन द्वारा, जो कि भारत की सबसे बड़ी एक लोक अदालत है, जहां कोई विधान बनाया जाता है, जहां जनता के प्रतिनिधि बैठते हैं

अगर उनकी उपेक्षा उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों द्वारा ही कर दी जाएगी तो फिर उसको मान्यता कहां मिलेगी। यह यहां की कार्यपालिका की मर्यादा का भी सवाल है और न्यायपालिका की मर्यादा का भी सवाल है। क्योंकि कल को अगर ऐसा होने लगे कि जो प्रशासन, पुलिस या न्यायालय के दायरे में कोई क्षेत्र आते हैं, जो काम आते हैं, जो फैसले आते हैं, वे फैसले कल को अगर संसद या विधान सभाएं लेने लगे और पुलिस को जो फैसला लेना होता है, वह कहीं यहां लिया जाने लगे, अगर इस तरह से यह होने लगे तो यह एक दूसरे के कार्यक्षेत्र पर अतिक्रमण होगा और यह अमर्यादित होने से इसके परिणाम भी अच्छे नहीं होंगे। इसके लिए आज सबसे बड़ा दायित्व तो न्यायपालिका का ही है, क्योंकि हमारे यहां न्यायपालिका का इतना बड़ा सम्मान है कि हम यह मानकर चलते हैं कि या तो ऊपर विधाता का विधान है, जो परमपिता का विधान है, और या यहां न्यायपालिका का विधान है, जिसमें हमारी आस्था है, हर देशवासी का आस्था है, तो यह आस्था कायम रहे, इसके लिए यह आवश्यक है कि यह ऐसी व्यवस्था सुनिश्चित हो कि कोई भी, जो संसद से पारित विधान है, उसको जब तक हाई कोर्ट में कम से कम 5 न्यायाधीश और सुप्रीम कोर्ट में कम से कम 7 न्यायाधीश मिलकर के जब तक आम सर्वसम्मति से फैसला न करें कि यह ठीक नहीं है, तब तक उसे रद्द न किया जाए। महोदय, ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए।

महोदय, आजकल पी॰आई॰एल॰ जनहित याचिका भी प्रायोजित होने लगी हैं, करवा दी जाती हैं। कई लोगों के अपने वेस्टेड इंटरेस्ट होते हैं। इसलिए इस तरह की याचिकाएं लगा दी जाती हैं। या कई बार ऐसी स्थिति होती है तथा स्वत: प्रेरणा से भी यह होती हैं तथा अब कोर्ट यह आदेश देने लगें के फैक्टरियां कहां लगेंगी, फैक्टरियां कहां बंद होंगी, यहां खनन कार्य बंद कर दिया जाए, यहां पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है, या मिड-डे-मील में भोजन कैसा दिया जा रहा है, कितना दिया जा रहा है, यह काम देखना जो भी संबंधित महकमें हैं, जो सरकार है, जो प्रणाली है, जो व्यवस्था है, उनका काम है। हां, अगर इसमें माननीय कोर्ट यदि यह निर्देशित करें या सरकार से या प्रशासन से यह कहें कि यह काम आपको करना है, जरा इसको प्राथमिकता से किया जाए, ऐसी वे कोई अपनी बात कहें तो यह अच्छा लगेगा। और मैं समझती हूं कि उसका सम्मान पूरे तौर पर किया ही जाएगा। लेकिन डायरेक्ट इस तरह से अगर प्रक्रिया अपनाई जाऐगी तो इसका संदेश क्या जाएगा और इससे दूसरे लोग, और महकमे जो भी हैं वे क्या सीख लेंगे और इसका पूरा ही कार्य प्रणाली पर निश्चित रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, प्रतिकूल असर पड़ेगा।

महोदय, हम सभी जानते हैं कि आज विभिन्न अदालतों में फौजदारी के मामले हजारों-लाखों की तादाद में हैं। कितने जमीनों से संबंधित मामले लम्बित पड़े हैं, वर्षों-वर्षों से लम्बित पड़े हैं। ऐसी न्यायायिक प्रक्रिया चलती है कि बेचारे आम आदमी, गरीब आदमी अदालतों के चक्कर काट-काट कर थक जाते हैं। पहली बात तो कोर्ट तक पहुंचना ही कितना कठिन कार्य है, वकील करना क्या आसान कार्य है, कितनी धनराशि, कितना समय, तो यह आम आदमी के बस की बात

नहीं है। और अगर फिर वह पहुंच भी गया तो क्या स्थिति न्याय की होगी और वह उसके लिए कितना महंगा होगा, कितने वर्षों तक प्रतीक्षा करे, कितने चक्कर काटे, धन और समय गंवाये और फिर भी कई बार कई लोगों को न्याय नहीं मिल पाता। महोदय, अगर हमारे जो उच्च न्यायालय हैं, उच्चतम न्यायालय है, वे कुछ इस व्यवस्था पर भी ध्यान दें और वे इसको जरा प्राथमिकता से देखें और निर्देशित करें निचली अदालतों को कि क्या ऐसी प्रक्रिया अपनाई जाए ताकि लोगों को शीघ्र त्वरित न्याय मिले, समय पर न्याय मिले। ऐसी इस व्यवस्था प्रणाली की ओर भी ध्यान दें तो यह भी एक जनहित के लिए बहुत अहम कार्य होगा। महोदय, मैं कहना चाहूंगी कि आज कल यह फैशन बन गया है, एक रिवाज बन गया है कि हर कोई नसीहत देता है जनप्रतिनिधियों को। सब नसीहत देते हैं सांसदों को, विधायकों को, उन पर टिप्पणियां करना, उनको आचरण की नसीहत देना आम बात हो गई है। कई बार माननीय न्यायालयों द्वारा तो, कई बार मीडिया द्वारा, कई बार आभिजात्य वर्ग के लोगों की तरफ से जो कभी वोट देने भी नहीं जाते, ऐसा कहना बहुत आसान होता है, लेकिन अगर कुछ अपवाद हैं, अपवाद कहां नहीं होते, जनप्रतिनिधियों में भी हो सकता है, वह कोई देवता नहीं, है, ऊपर से उतर कर धरती पर नहीं आते हैं, वे भी मनुष्य हैं, कभी कहीं कोई भूलचूक भी हो जाती है, कोई गलती भी हो जाती है। लेकिन अगर इसे सामूहिक रूप में देखा जाए तो ऐसे कितने लोग हैं? फिर आप इसकी प्रक्रिया भी देखिए। अभी सांसद कोष का मामला हुआ, कार्यपालिका के द्वारा इस कार्य में कितनी जल्दी दिखाई गई, स्पीकर महोदय एवं सरकार का क्या रुख रहा और किस तरह यह कार्य कितना त्वरित हुआ, अभी वह दोषी प्रमाणित हुए भी नहीं, उससे पहले ही कार्यवाही की गई। आज एक सांसद का, विधायक का, सरपंच का या जो भी जनप्रतिनिधि हैं, उनका जीवन कोई आसान नहीं है। उनका दिन, दिन नहीं है, रात, रात नहीं है। कभी भी लोग उनसे मिलने पहुंच जाते हैं। उस क्षेत्र की आम जनता यह जानती है कि किस तरह जनता के बीच में लगातार उन्हें अपनी अग्नि परीक्षा देते रहनी पड़ती है। यह कार्य कोई आसान कार्य नहीं है, उसके बाद वह कहीं जा कर चुनाव में पहुंचता है और फिर उसे चुनाव के जरिए यहां तक पहुंचाया जाता है। इस तरह कहीं न कहीं वह जनता की आशाओं एवं आकांक्षों का प्रतीक होता है, तभी वह यहां तक आता है।

कुछ चंद बातों को लेकर यह प्रक्रिया शुरू हो जाए कि जब देखो उसके आचरण एवं उसके व्यवहार पर खूब टिप्पणियां होती रहें, तो यह ठीक नहीं है। यह बात सही है कि मीडिया, कार्यपालिका, न्यायपालिका, ये सब इस लोकतंत्र के मजबूत स्तम्भ हैं, आवश्यकता पड़ने पर ये एक-दूसरे के लिए कुछ राय भी दे सकते हैं हम भी आज यहां पर खड़े हो कर अगर कोई बात कहते हैं, तो यह कोई हमारी व्यक्तिगत राय नहीं है। जनता की जो भावनाएं हैं, उनकी जो शंकाएं हैं, हम जब उनसे मिलते हैं, उस समय उनके जो प्रश्न आते हैं, इन सबके आधार पर ही यहां पर हम कोई बात कहते हैं। कभी मीडिया के साथी भी तो अपने गिरबान में झांक कर देखें कि देश में ऐसी-ऐसी घटनाएं होता हैं, उनमें से किसी भी घटना के कारण कभी-भी पूरे देश में आग फैल सकती है, दंगे हो सकते

हैं अथवा साम्प्रदायिक तनाव पैदा हो सकते हैं, इसलिए वे भी तो अपनी जिम्मेदारी समझें। होता यह है कि उन घटनाओं को वीजुअल मीडिया में, न्यूज चैनल्स में हाईलाइट करके बार-बार घुमा-घुमा कर दिखाया जाता है और उसके बाद कार्यक्रम बना-बना कर बार-बार उनका प्रदर्शन किया जाता है। इससे देश का क्या भला हो रहा है? समाज का क्या भला हो रहा है? कौन सी जानकारी मिल रही है? क्या वह केवल एक सूचना या समाचार भर देना है? वे जो उसे इस तरह प्रस्तुत करते हैं जैसे कोई गॉसिप हो। यह चीज़ बहुत घातक है।

आज मीडिया के लोग हमेशा जन प्रतिनिधियों को ही नसीहत देते रहते हैं, वे खुद भी तो कभी अपने आचरण के बारे में विचार करें कि वे आज देश को क्या दे रहे हैं। न्यायपालिका को यह अधिकार है कि वह जनप्रतिनिधियों को नसीहत दे, उनको गाइड करे, उन्हें मार्गदर्शन दे, लेकिन आप यह भी तो देखें कि कहीं न कहीं हर एक की कोई मर्यादा निश्चित है। वे अपना व्यवहार भी उसी तरह का रखें ताकि जन प्रतिनिधियों को यह आवश्यकता ही नहीं पड़े यह आवश्यकता ही न पैदा हो कि सदन में इस तरह का कोई प्रस्ताव विचार के लिए लाया जाए और उस पर विचार करने की आवश्यकता पड़े।

महोदय, कभी-कभी लोग कई सवाल पूछते हैं। कई बार मीडिया में किसी समाचार को लेकर जिस प्रकार का प्रस्तुतिकरण होता है, क्या यह कहीं न कहीं न्यायाधिपतियों के व्यवहार व कार्यकलाप को प्रभावित नहीं करता है? इस संदर्भ में भी विचार किए जाने की आवश्यकता है। क्योंकि कई बार जनता इस चीज़ को देखती है और सोचती है कि यदि किसी जमीन संबंधी मामले में, दुर्घटना के मामले, में, शिकार के मामले में अथवा किसी अन्य मामले में कोई महत्वपूर्ण व्यक्ति जुड़ा हो ता देखा यह जाता है कि उसमें अदालतें बहुत त्वरित गति से कार्य करती हैं और उनकी उसमें अधिक रूचि दिखाई देती हैं। लेकित न्याय के मापदंड सभी के लिए एक जैसे हैं, चाहे वह गरीब है या अमीर है, यह लोकतंत्र की सबसे बड़ी खूबी है। चाहे वह कोई महत्वपूर्ण व्यक्ति हो या आम तबके का आदमी हो, जब न्याय सबके लिए बराबर है, ऐसे में अगर मीडिया कुछ खास लोगों के मामले को हाईलाइट करता है और उसी के अनुरूप अगर न्यायालयों में भी खास रूचि दिखाई देती है... तब आम आदमी के मन में कुछ शकाएं उत्पन्न होती हैं कि ये क्या मामले हैं? कहीं दुर्घटना के या शिकार के या जमीन के मामले में अगर आम लोग जुड़े हुए हैं तो उनको देखा ही नहीं जा रहा है, उनकी कहीं सुनवाई ही नहीं हो रही है। दूसरी तरफ जब कहीं कोई महत्वपूर्ण व्यक्ति जुड़ा होता हैं ता लगातार उस मामले को देखा जाता है क्योंकि वह मीडिया में प्रचारित-प्रसारित होता है। यह सब क्या है? इससे कुछ प्रश्न खड़े होते हैं। मैं समझती हूं कि इस बारे में भी सोचे जाने की आवश्यकता है। अंत में, चूंकि पिछली बार भी इस विषय पर मैंने अपने विचार रखें थें, मैं केवल इतना ही कहना चाहती हूं कि महिला अदालतें भी बनी हैं। राजस्थान में विदेशी महिलाओं के बलात्कार के मामले में बड़ी तत्परता दिखायी

गयी, बड़ी गति दिखाई गयी और दस-पंद्रह दिन में ही न्याय किया गया, सज़ा सुनायी गयी। मैं यह भी कहना चाहती हूं कि यह जो तत्परता हैं, जो विदेशी महिलाओं के साथ बलात्कार के मामलों में दिखाई गयी है, उसी प्रकार माननीय अदालतें महिलाओं के उत्पीड़न, उनके साथ हुए बलात्कार के संबंध में जो देशी महिलाओं के मामले हैं, जो इस देश में रह रही हैं, जो गरीब और आम महिलाएं हैं, जो बड़ी मुश्किल से अदालतों तक अपील लेकर पहुंचती हैं, उनके मामलों में भी ऐसी व्यवस्था कायम करें कि उनमें भी उतनी ही तत्परता दिखाई जाए, उतना ही शीघ्र न्याय उन्हें भी मिले और हरेक को, आम आदमी को एक समान न्याय मिलें, हरेक की अपनी एक मर्यादा सुनिश्चित हो। हमारा दायित्व है कि न्यायपालिका की मर्यादा अक्षुण्ण बनी रहे, उसके प्रति हम जागरूक रहें। साथ-साथ कार्यपालिका की मर्यादा भी अपनी जगह बनी रहे, सब अपने-अपने कार्य को ठीक प्रकार से करें, इसी तरह की प्रक्रिया स्थापित हो – यही मैं अंत में कहना चाहती हूं और इस संकल्प को समर्थन देना चाहती हूं। धन्यवाद।

DR. GYAN PRAKASH PILANIA (Rajasthan): Sir, I am grateful for your kind indulgence to permit me to speak on this Resolution. Sir, this Resolution is thought-provoking, but it will be a sad day when this Resolution whic circumscribes the autonomy, the authority and the independence of Judiciary would be accepted. The threat that Judiciary will dictate such kind of orders as will negativate the sovereignty of Parliament, I think, Sir, is ill-conceived. Our Constitution has laid down the fundamental principles of separation of powers where the executive, the legislative and the judiciary have their distinct functions, their distinct roles and their distnct usefulness. I think nowhere in the world such kind of a rule or law or circumscription will be there that Supreme Court, the highest judicial authority in the country, should pass some kind of a judgement only with a Bench of five judges, or, three judges, on seven judges, or nine judges. They have their own laid down procedures, but nowhere in the world such kind of circumscription is there. The Judiciary is independent, the Executive is independent, and the Legislature is independent in their own sphere, but none of them is sovereign. Sovereign is the Constitution of the land, sovereign is the basic law of the land, and all these three organs o the State have to work according to the Constitution, and if they do not act according to the Constitution, their action will be *ultra vires*. So, adopting this Resolution will appear ridiculous. Unfortunately, we are assailing the judiciary here which has no representative in this august house. They can't defend themselves. But it is a misconception that the Judiciary is there to do something against the wishes of the Legislature; it

is not that way. And, the Judiciary never claims it is infallible. Very recently, the Chief Justice of Supreme Court had declared publicly that 'we don't claim that our judgement would not be wrong, but whatever is there, that is final.' That has to be accepted. So, I do not think, Sir, we will be doing glory to this august legislative house by passing such kind of Resolutions and doubting the very integrity of our highest Court which is recognised throughout the world as one of the best of the courts, whose judgements are held in high esteem worldwide, in all judicial circles.

So, I, with all appreciation for Shri Laxman Naik for moving this Resolution, humbly submit that it will be a sad day when such kind of Resolutions will be accepted, and Sir, I strongly oppose it.

Thank you very much for having given me this opportunity.

DR. ABHISHEK MANU SINGHVI (Rajasthan): Sir, I congratulate the hon. Member, not so much on the legislation he proposes, not so much on the wording, but on the spirit which animates and lies behind it. I think, the spirit is important to be appreciated. What is the idea? The idea is to ensure that collectivity of decision-making will give us a better decision. If two heads are better than one, then three and five heads are normally spposed to be better than two. It is interesting that in the apex court, the Supreme Court, there is a rule from Independence till now that no judge of a single Bench can hear matters. That is not so in the High Courts and the Lower Courts, but in the Supreme Court, a single Judge cannot constitute a Bench for any matter, except some very small, inconsequential chamber matters in lunch time, Except that, it has to be a minimum of two Judges: Now, the spirit is the same, as the Resolution proposed by my friend. The spirit is that if you expand the decision-making base, you are likely to get a better decision. Bu let us apply it to the issue which the hon. Member has raised. The issue is, in our system, there is a hierarchy of laws. At the top stands the Constituion of India. below he Consitution of India stands a statute of Parliament, legislation. below that stands delegated legislation, namely, notifications or rule-making powers. Below that stands executive orders and so on and so forth. Now, the hon. Member's spirit behind the Resolution is illustrated by a simple thing. When the Supreme Court or the High Court decides to consider a constitutional amendment and its validity or otherwise, it normally constitutes a Bench of five or seven Judges. For example, in the famous basic structure of the Indian Constitution case, Kesavananda

Bharati, we had the largest Bench ever, 13 Judges. Thirteen have never sat before or thereafter. Prior to that in Golaknath's case, which was overruled by Kesavananda Bharati, you had eleven Judges. What is the idea behind this? The idea is that human beings, including Judges, are necessarily fallible. They are necessarily prone to error, as all of us are, because to err is human and to forgive and forget is divine. Therefore, you must have more and more people participating in important matters of moment, including matters involving high constitutional principles or legislative principles. So. that is the spirit behind my friend's Resolution. If you apply the hierarchy which I have just said where the Constitution has stopped, Legislation comes next and below that comes a whole range of delegated legislation—then it is very important that legislation be not struck down casually, legislation be not struck down frequently and legislation be not struck down without application of mind. You could have variance to my friend's Resolution. For example, as a matter of practice, not as a matter of law, courts very rarely stay legislation. If there is a notification or a delegated legislation, the court may or may not stay, but if there is legislation, interim stay is not normally granted as a practice of the court itself. Why is that? It is because legislation is given a higher status. It is something which goes through the collectivity of this House, of the next House, of the President of India, and that is rightly entitled to more weight. Therefore, I think this is a salutary rule; it is something which is desirable in the public interest. It takes account of realities, because adjudication, judgement giving and decision-making are a peculiarly human task. It is something which has to have subjectivity varying from judge to judge and that subjectivity cannot be eliminated--we are all human beings—but it could be minimized. You could minimise subjectivity by having larger collectivities and that is the spirit behind the hon. Member's Resolution.

Secondly, Sir—and a word of caution here, a word of caution in respect of an issue which the hon. Member may not even have anticipated—although this is desirable in the interest of the nation, there may be issues of constitutional validity of this resolution itself. That is because, given the powers exercised by our courts, given, what I might call, the current phase of judicial activism sweeping across the length and breadth of the country, not only in one court but, across the board, in different courts, it is entirely likely that a law which says that you shall decide only in benches of five or three may itself be struck down as being supposedly an unconstitutional

interference in the working of the courts by the courts themselve. That is an example of judicial activism and unconstitutionality. Of course, whether this would happen or not would depend on if and when a law is passed and if and when it is challenged. But certainly, in principle, the law is desirable and if and when it is passed and if and when any court decides to strike it down by saying that 'we are being forced to decide in collectivities which we don't want to do', then you may even have to consider a constitutional amendment with the same provision.

Sir, behind this lies the larger debate of judicial activism versus judicial restraints. It is not necessarily a debate which is today before the House in its full comprehensive contours, but certainly it is the bedrock and the sentiment which lies behind some of the issues raised in today's Resolution.

Sir, judicial activism and judicial restraint both, again, as I said a few days earlier here, in my humble opinion, represent extremes and the golden virtue lies really in between these extremes. As Aristotle had said, 'extremes are always vices, the virtue lies in between'. Take, for example. Public Interest Litigation. Public Interest Litigation is an innovation of the judiciary in India of which we are rightly and justly pround. It was invented in the early 1980s and the late 1970s to deal with certain issues of physical human rights violations. But Sir, PIL is an unruly horse. It depends very much on the dexterity of the rider as to how well the unruly horse would perform. The rider has to be dexterous. Thus, the concept of PIL may be good, but if the riders are spread over 5000 different judges with 5000 different approaches all over the country, naturally sometimes the horse could be allowed to become far two unruly. It is, therefore, necessary to realise the subjectivity in judicial decision-making and adjudication. It is, therefore, important to realise that while on the one hand legal or judicial concepts may be good, they have to be exercised within the rubric of self-denial and of self-restraint. As somebody has said, the greater the power, the more important it is to use restraint in its exercise. Overuse, frequent overuse of a potent power, dilutes it and makes it less efficacious. That is what all organs have to realise, including the judiciary. It is the Constitution that is supreme. The Constitution draws the *lakshman rekha* between the three organs, the Executive, the Judiciary and the Legislature, and indeed, between the others, the organs of estate, namely the Press, and its other organs. This *lakshman rekha*

cannot be transgressed merely because what the Constitution says and what it means is given to one of the three organs. What the Constitution says and means, no doubt, is decided by one organ, but in the guise of deciding it you cannot expand your own *lakshman rekha* and redraw it. That is the crux of decision making; that is where the errors sometimes occur; that is where the errors can be reined in by creating a larger collectivity and that is where the resolution moved by my friend has some relevance. Sir, where on the one hand judicial activism or judicial power can do good, it can easily become farcical sometimes. We are not here in this House to discuss individual cases. But, for example, would a public interest litigation power the usefully used to deal with monkeys in Delhi, to direct that monkeys in Delhi be re-exported out of the city to other States? Is that a fair, proper and correct use of this power? An interesting thing can happen that the receiving State can object that 'we do not want langurs exported from Delhi in our own State. under what power can you direct that a langur be exported from here into our own State since they are a threat to humanity in our own State?' Now this is an issue where you have to realise where the *Laxman Rekha* will be drawn. Therefore, sometimes, the collectivity underlines the larger benech or the 5-judges, or the 7-judges or the 3-judges the numbers are not relevant can make a difference. Sir, ultimately, one must realise that by its very nature the judicial function is different from the executive function and the legislative function. The judicial function has several positives; it has several plus points. But it has some in-built negatives. I am not talking of judge-A or judge-B, but it has in-built negatives in its very nature. The in-built negatives are, a judge-made law is individual law made in individual cases. The law expands by deciding individual cases. An individual case may have individual features, but in deciding it you lay down general principles which apply well beyond the narrow individual facts of that case. This is the essence of judgement giving; this is the essence of judicial law creation. Now, therefore, in the course of deciding the facts of the case, you are laying down law for other cases. It is all the more important to exercise a certain self-imposed limitation, a certain self-imposed restraint. It is all the more important to ensure that the subjective element and the objective element are clinically separated. The subjective element is necessary. It is necessary because it is the fact of the particular case which enables a judge to do justice in a case. But along with a subjective element, there has to be an objective element that if I lay down, apart from the facts of the case, a general principle,

you have to anticipate that there are going to be subsequent cases where that same principle may be well misused, may be well misapplied and that is where the collective decision-making is important because when one judge may decide to expand the frontiers of the *Laxman Rekha*. another judge may rightly decide to pull him back. That is why I think that this must not been seen as an onslaught or an attack on the judicial functioning. It is only meant as a facilitating technique to remaind all organs that it is not the individual discretion or the individual opinion. which matters for the nation, it is the collective opinion of the court which matters. Now, I must tell you that there are several countries, for example, America, where the apex court-in our country, as I said, the apex court is unique because it has to sit in benches of two and in matters of constitutional validity, they sit, by convention, in benches of five-by the Constitution of America, can only sit together; no benches can sit. Of course, their court is half the size of our Court. They have eleven. But all eleven have to sit together, what they callen bloc, and not separately. By the same principle, the same reasoning, they can also sit separately. By sitting separately, they can dispose of more cases, But, since the US Supreme Court deals mostly, almost entirely, with matters of public importance of constitutional law, they have an invariable rule that the entire court sits together. Take, for example, the House of Lords, which is the apex court of England. The House of Lords like our Supreme Court, decides matters not merely constitutional but also ordinary matters like private law disputes. The House of Lords does not ever sit in a combination of less than five. Sir, I am not suggesting that for every matter in India, it should be five. There are reasons for that; there are logistic reasons for that. We do not have enough Judges in the Apex Court. If the whole Court or five people were to sit on every matter, our disposal rate would come even further crashing down and the huge arrears would increase. So, that is not the point. The point is that for important matters or for matters which involve a challenge, or a stay, or voiding, or an invalidation of legislation, there is no reason why the Court should not itself sit in Benches beyond a certain minimum strength. And, I would, in fact, Sir, with your kind permission, opine that, if and when this august House so opines, this is possible by a simple change in the rules of

Supreme Court. As you know, the Supreme Court has a Supreme Court Rule Book. You don't need legilsation for it. You don't need an Act of Parliament for it. You don't need a Constitutional amendment. The Supreme Court rules can be simply changed. It says today that all Benches have to sit in a minimum strength of two and it also says that all Benches have to sit in a minimum strength of five for Constituional matters. It has to add only one clause. The clause has to say that whenever an invalidation of a legislation is immenent, or likely, or asked for, then the minimum Bench should be 'X'. That 'X' can be debated, whether it should be five. Perhaps, it is a good figure to have five. But, the point is that this can, and I submit it should be done. I congratulate the Member for something which is deeper than it looks, for something which is in the national interest and for something which is a little noticed fact but which deserves to be highlighted in this august House.

श्री राजनीति प्रसाद (बिहार): उपसभाध्यक्ष महोदय, माननीय सदस्य श्री शांताराम लक्ष्मण नायक को यह संकल्प विचार के लिए लाने हेतु मैं धन्यवाद देना चाहता हूं। महोदय, मुझे कभी-कभी ऐसा लगता है कि हम लोग जो यहां कानून बनाते हैं, जजेज या न्यायालय के लोग यह सोचते हैं कि शायद हम लोगों को दिमाग नहीं है, हम लोगों को बुद्धि नहीं है। हम लोगों ने बिना जांच-पड़ताल के या विचार किए बगैर यह कानून बना दिया है, ऐसा उन को लगता होगा और वह अपने दायरे से हटकर या जो काम उन को मुकर्रर किया गया है, उस से हटकर कुछ ऐसा कर देते हैं जिस से हम लोगों को कभी-कभी ऐसा महसूस होता है कि हम इस august House में नहीं हैं बल्कि उन के under में काम कर रहे हैं। अभी डा॰ प्रभा ठाकुर जी बोलीं और हमारे दोस्त डा॰ अभिषेक मनु सिंघवी जी भी इस विषय पर बोले और हम को अच्छा लगा। उन्होंने सारी बात कह दी और एक बात judicial activism की भी कह दी कि हमारे यहां judicial activism है। मैं भी कहना चाहूंगा कि जब judicial activism शब्द आ गया तो इस का मतलब है कि वह कुछ ऐसा कर रहे हैं, जो नहीं करना चाहिए था। यह शब्द नहीं आना चाहिए था। इस शब्द का मतलब है कि हमारे जो कानूनी दायरे हैं,हमारी जो soveregnity है, वे उस के ऊपर काम कर रहे हैं। इसलिए यह कानून बनाने की बात हो रही है और सुप्रीम कोर्ट और हाईकोर्ट में 5 जज व 7 जज की बैंच बनाने की बात हो रही है। श्रीमन्, हमारी सरकार इस की भुक्तभोगी है। हम लोगों ने अच्छे-अच्छे कानून बनाए हैं और रात में एक कानून बना और सुबह देखते हैं उस कानून को खत्म कर दिया गया है, कह दिया गया कि वह गलत है। इतना ही नहीं बल्कि अपने अधिकार से अलग रहकर जूडिसियरी के द्वारा सरकारों को ''जंगल राज'' कहा गया। यह ''जंगल राज'' है, ऐसा भी कहा गया। तो ऐसा लगता है कि उन को ऐसा कहने की आजादी नहीं है क्योंकि हम लोग जन-प्रतिनिधि हैं, चुनकर आते हैं। इसलिए उन को

भी अपने दायरे में रहना चाहिए क्योंकि हम को पावर लोगों ने दी है, कानून ने पावर दी है। अगर वे यह सोचते हैं कि उनको कानून के पावर का उल्लंघन करना है या अगर वे यह सोचते हैं कि हम ऊपर से ज्यादा सुपीरियर हैं, तो यह गलत होगा।

उपसभाध्यक्ष जी, मैं यह भी कहना चाहूंगा कि ऐसा लगता है कि जब उनकी बात सुनी नहीं जाती है या उनकी बात को हम लोग अनमना कर देते हैं, तो वे ज्युडिशियल एक्टिविज्म का काम करना शुरू कर देते हैं। उपसभाध्यक्ष जी, उदाहरण के लिए मैं आपके माध्यम से कहना चाहूंगा कि दिल्ली में जो सीलिंग हुई, उसके लिए कानून बना और हम लोगों ने उस कानून को पास किया। कानून को केवल पास ही नहीं किया गया, बल्कि उस पर राष्ट्रपति जी के दस्तखत भी हो गये। एक दिन उस संबंध में सुप्रीम कोर्ट का कथन आ गया कि नहीं साहब, हम इसको नहीं मानेंगे, जो मेरा कानून है, वही रहेगा। उसके बाद एक अखबार में आ गया कि नहीं मानेंगे। फिर उन्होंने सीलिंग-वगैरह करना शुरू कर दिया। जब दूसरे दिन, तीसरे दिन और चौथे दिन एजिटेशन हुआ, पूरा हंगामा हुआ और दिल्ली बंद हुई, तो उनका दूसरा डिसीजन आ गया। कहा गया कि इसमें ऐसे एफिडेविट करो, ऐसे करो, वैसे करो। क्या कहना चाहते हैं वे? वे कहना क्या चाहते हैं, करना क्या चाहते हैं? हमने जो कानून बनाया, उसको राष्ट्रपति जी ने फिर से दोबारा हमारे पास भेजा। तब फिर हम लोगों ने उनको कहा कि नहीं साहब, आप इसको करिए। हमने लोकहित में कहा। फिर उन्होंने दूसरी बात कही कि एफिडेविट करिए, इसका मतलब क्या हुआ? उपसभाध्यक्ष जी, मैं कहना चाहूंगा कि इसका मतलब यह हुआ कि लोगों की जो आवाज है, उसको भी सुप्रीम कोर्ट ने सुना, सुनने का काम किया। यह अच्छी बात है कि सुप्रीम कोर्ट ने उनकी बात को सुनने का काम किया। लेकिन जब आपने अखबार में निकाल दिया कि हम उसकी बात नहीं मानेंगे, तब हम लोग डिमॉरलाइज हो गए। इसलिए नायक साहब ने यह जो प्रस्ताव लाया है, मैं उसका समर्थन करता हूं। यह कानून जरूर होना चाहिए। अगर यह कानून होता है, तो हमारी अपनी मर्यादा भी रहेगी। मैं इनके इस रेजोल्यूशन का समर्थन करता हूं। धन्यवाद।

श्री विजय कुमार रूपाणी (गुजरात): माननीय उपसभाध्यक्ष जी, नायक जी ने यह जो संशोधन रखा है, उस पर मेरे साथी मित्रों ने जो बात रखी है, उसी तरह से मैं भी उसका विरोध कर रहा हूं। मैं उसका विरोध इसलिए कर रहा हूं कि हमारा देश एक बड़ा लोकतांत्रिक देश हैं। परंतु हमने जो लोकतंत्र की प्रक्रिया स्वीकार की है, संविधान में जिस तरीके से लोकतंत्र का पहलू दिखाया है, उस तरीके से हमें काम करना है। हमारी 110 करोड़ की आबादी है और प्रत्येक व्यक्ति यह माने कि मैं रूलर हूं, इस तरीके की भावना जो प्रत्येक व्यक्ति अपने में रखे और उससे लोकतंत्र प्रभावी हो, इसलिए मैं इस संशोधन का विरोध कर रहा हूं। लोकतंत्र में 4 पिलर्स है, एक पालियामेंट, दूसरा गवर्नमेंट, तीसरा अपोजिशन और चौथा लोकतंत्र में 4 पिलर्स हैं-एक पालियामेंट, दूसरा गवर्नमेंट, तीसरा अपोजिशन और चौथा प्रेस, चारों पहलुओं पर यह लोकतंत्र

टिका हुआ है। अगर कोई भी पहलू गिर जाएगा या कोई भी पहलू वीक हो जाएगा, तो इसका लोकतंत्र पर बड़ा असर होगा। हमने इमरजेंसी में यह सब देख लिया है। During the emergency, जो प्रेस की सेंसरशिप हो गई है, उस वक्त भी यही बात होती थी कि प्रेस वाले गलत लिखते हैं, प्रेस वाले बात को इतनी बढ़ा देते हैं, देश का विकास नहीं हो रहा है, तो प्रेस पर सेंसरशिप रहनी चाहिए और प्रेस को, मीडिया को दबाने की चेष्टा की गई। इसके बाद अपोजिशन को जेल में डाल दिया और अपोजिशन को भी खत्म कर दिया था ज्युडिशियरी में भी स्टॉप कर दिया था, हैबियस कार्पस को भी मिटा दिया था। उससे लोकतंत्र का बहुत बड़ा नुकसान हुआ था। बाद में कांग्रेस पार्टी ने यह स्वीकारा कि ऐसी गलती हम दोबारा नहीं करेंगे। आज मुझे इस संशोधन से ऐसा लगता है कि हम उसी दिशा की ओर जा रहे हैं। सुप्रीमैसी ऑफ् दि पार्लियामेंट, सुप्रीमैसी ऑफ् दि ज्युडिशियरी, सुप्रीमैसी ऑफ् दि अपोजिशन, सुप्रीमैसी ऑफ् दि प्रेस, यह लड़ाई भी है और संविधान में इन सब को सुप्रीमैसी दी गई है। अगर पार्लियामेंट में हम गलत काम करेंगे, सांसद के नाते हम गलत काम करेंगे तो हमारे ऊपर भी ज्यूडिशियरी है। अगर हम गलत संशोधन करेंगे तो आम आदमी कहां जाएगा? वह सार्वजनिक हित की याचिका के आधार पर कोर्ट का द्वार खटखटाएगा और कोर्ट को बताएगा कि पार्लियामेंट में यह गलत हो रहा है, उसको रोका जाना चाहिए और हमें भी संविधान और कायदे-कानून के अंतर्गत सुप्रीम कोर्ट की बात भी समझनी पड़ेगी। अगर यह सब नहीं होगा और मीडिया वाले नहीं लिखेंगे तो कौन लिखेगा? आज चैनल, मीडिया, पत्रकार, टेलिप्रिंटिंग, न्यूजपेपर के आधार पर भी लोकतंत्र जीवित रहता है और हम यही बात कह रहे हैं कि उनको यह नहीं करना चाहिए, उनको वह नहीं करना चाहिए, यह बात भी गलत है। अगर कहीं भी खामी है तो उसको साथ में बैठकर दूर किया जाना चाहिए। राष्ट्रपति हमारे संविधान में सर्वोच्च हैं, संविधान में उनको सर्वोच्च सत्ता दी गई है। जैसे अफजल का मामला हुआ, तो आप लोग उस वक्त बता रहे थे कि प्रोसिजन चल रहा है, न्याय सबका अधिकार है, उसको भी न्याय मिलना चाहिए। तब क्यों नहीं बताया? वह त्रासवादी है, उसने देश की पार्लियामेंट पर अटैक किया था। फिर भी हम शांतिपूर्वक राह देख रहे हैं और सारे प्रोसिजर का उसको अधिकार दे रहे हैं और उसको न्याय मिले, उसकी हम चिंता कर रहे हैं। श्री राम जेठमलानी जी ने बताया था कि उनको अच्छा वकील नहीं मिला था, उनके लिए भी सोचना चाहिए। हरेक आदमी को लोकतंत्र में पूरा अधिकार मिले, यह बहुत जरूरी है। अगर किसी भी विधेयक या हमारी पार्लियामंट के किसी भी रेजोल्यूशन को कोर्ट में चैलेंज किया जाता है तो उसे हमको स्वीकार करना चाहिए और कोर्ट के जो रिमार्क्स हों, उनके बारे में भी हमें यहां सोचना चाहिए, क्योंकि हमें संविधन के आधार पर देश को चलाना है। अपोजीशन की इज्जत होनी चाहिए। कल को आप यह कहेंगे कि मीडिया को भी ऐसा करना चाहिए। आज हम ज्यूडिश्यरी को बता रहे हैं, कल को आप अपोजीशन को बताएंगे कि अपोजीशन को सिर्फ यह करना चाहिए, इतना ऐजिटेशन नहीं करना चाहिए। यह अतिक्रमण की बात है। लोकतंत्र में सभी को

पूरी तरह से अपनी आवाज रखने का मौका मिलना चाहिए। मैं मानता हूं कि इस संशोधन से हमारी दृष्टि में, सुप्रीमेसी ऑफ दि पार्लियामेंट की बात चल रही है, वह भी ठीक नहीं है, इस पर हमें विचार करना चाहिए। इसलिए मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं।

SHRI PRAVEEN RASHTRAPAL (Gujarat): Thank you, Mr. Vice Chairman, Sir. I am in favour of giving full power to the Parliament only in view of the various provisions in the India Constitution. You will kindly appreciate that Fathers of the Constitution, that is, the Constituent Assembly of India, in fact, started the work in the month of December, 1946 for framing a Constitution for a free, democratic country. And, the said work was completed after great labour on 26th January, 1950, on the day which was declared as the Republic Day for this country. The Constitution is not made by A or B, not this party or that party. As very rightly pointed out yesterday by one of my colleagues, in the very Preamble, it is a document framed by the people of this country. So, the entire country has imposed faith and confidence in the Constitution of this country. Hence, it is supreme. Now, the same Constitution has divided the governance of this country into three major compartments, one is Legislature, second is Judiciary and the third is Executive. All the three were given sufficient powers as far as governance in a democratic country is concerned. In fact, right now, a debate is going on in this country as to who is supreme. I will say that the Constitution of the country is supreme and all others are subordinates. The Parliament of the country, the judiciary of the country and the Executive of the country are the creations of the Constitution. That which is created by the Constitution cannot be above the Constitution. This very Parliament also came into being only because of the provision given in the Constitution. But, at the same time, courts, particularly the Supreme Court, are given power to interpret the law; that much only.

The present Chief Justice of India himself, in one of his lectures at Ahmedabad, admitted, "As far as interpretation of law is concerned, we are supreme." At the same time, he admitted, "Some time we also make mistakes; but once we decide, we are final." that is the opinion given by the learned Chief Justice of this country in one of his lectures at Ahmedabad in this very month.

With due respect to both Parliament and Judiciary, we have power to make laws. As far as the State Government are concerned, the State Assemblies have the power to make laws. The Central Government has

3677RS—18A

got direct jurisdiction in many respects.The Central Government has concurrent jurisdiction in many respects. The State Governments have powers in the subjects which are in the State List. But all said and done, the Supreme Court has the power to interpret the law. The Mover of the Resolution has very correctly requested that no law made by Parliament, no law made by the State Legislature, be declared null and void, because that will be challenging the wisdom of the people. After all, who are we here? I am nobody as an individual when I am no more a Memebr of Parliament. I am like any ordinary citizen. But once I am sent to this House, the Council of States, it means the people of my State, at least, have faith in me. So, Mr. X will go to the Upper House, the Council of States, and represent the State. Similarly, a Member wins the election from a particular constitutency and comes to the Lok Sabha. We have got 543 constitutencies. Now, the entire country is divided into 543 constituencies. They have faith in their representatives. And Mr. X says that we are also making blunders when we decide something after due deliberation. Sir, we have improved a lot. The present procedure of Standing Committees on various Departments in our Parliament is one of the best mechanisms. We also appreciate that sometimes we are not able to discuss a subject thoroughly in this House and, as a result, we again represent ourselves in the form of the Standing Committee. A Bill is sent to a Standing Commitee for a thorough discussion, and it gives opportunity to the public also. After that, a matter is finally decided. With due respect to the limited powers given to the courts in this country, I am of the considered opinion that any law which is made, any law which is passed in Parliament, any amendment which is made by Parliament, cannot and should not be declared as null and void by any other system. Thank you.

SHRI TAPAN KUMAR SEN (West Bengal): Sir, I rise to support the spirit behind the resolution, not verbatim. Through this resolution, I am grateful to my colleague, Shri Naik, that he brought forth a very critical problem before the entire democracy in our country, where a law is being made by the people's representatives, and it is being nullified by an institution appointed under the Constitution. The democratic structure is defined by the Constitutions. Legislature makes law, and that is being made null and void by another institution defined by the same Constitution. But the difference which remains between the two institutions is that one

reflects the people's voice, which is supreme in a democracy, and another is just not of that kind. Shri Rashtrapalji has just explained that everybody's job is defined under those institutions. One is to frame the laws to reflect the people's voice and another is to interpret whether the Executive is operating within the framework of that law. So, when the Judiciary is to pronounce its judgement, they are supposed to pronounce their judgement within the framework of that law by not transcending it or they have also to look into the aspect whether any piece of legislation framed by both the Houses of Parliament militates against the basic spirit of the Constitution. I think, these are the basic premises on which these institutions are supposed to act. This is put at stake by different experiences of different judgements and the terminologies, like judicial activism, have come up as a very popularly used parlance, being debated and discussed when we talk about the democratic polity. So, in this situation, definitely, a time has come when the society must give it a re-look very seriously. It is not because it has put the Legislature or the Executive in difficulty. It is not because of that. Many of these judicial activisms are also aiding, or rather helping, the other wing of the State machinery, that is the Executive and sometimes, even the Legislature. I can put a different angularity on the whole point. That angle is that on the matter of labour reform, the Legislature has been making exercise since the last ten years to make certain changes to which, it is a reality, the people's voice is not responding. That legislation could not be framed up because that consensus could not be developed. This is a reality in democracy; something takes more time than the other.

Now, some of the judgements which are coming up recently are coming to the aid of the Legislature. I must not say Legislature, but the Government which wants to bring a particular type of legislation in order to introduce so called labour flexibility, some pre-emptive judgement is taking place in that direction. Here also, again, Judiciary is transgressing its border, as defined by the Constitution. On he right to strike, a judgement has been passed by the Supreme Court. Subsequently, while interpreting the Contract Labour (Regulation and Abolition) Act, 1970, it has demolished the very basic structure of that Act, saying that contract labour deployed on contract in permanent nature of job cannot have a right to regularisation if they are deployed in the prohibited area of employment. What is this? The basic spirit of that particular Act has

been taken away by that judgement. So, these kinds of things are taking place which is really a matter of serious concern for the whole democratic structure itself. My colleague rightly said, nothing is as constant as the Northern Star.

On sealings in Delhi, yes, some judgement had been pronounced nulliying the place of legislation passed by this House and thereafter, it changed when people's voice became louder enough to make them concerned. I have seen it in my home State. Finding its car blocked in a road jam because of some procession, the Judiciary pronounced a judgement that there should be no procession from eight in the morning till eight in the night. That day, people voiced against that judgement. Next day, there were big processions and lakhs of people were on the road. And on the next day, the Division Bench changed that judgement. When court declared bandh declared illegal, number of bandhs have taken place thereafter. Even today, not by my own party, by Opposition party in Bengal, some bandh is organised. Some people are participating in that. Ultimately, the people's voice is heared much louder. I think, the Constitutional agencies which are all composed of human beings like us, should take a message from that and should remain cautions so that they do not transgress the border defined by the Constitution, and I think, precisely that concern was expressed by Mr. Naik's Resolution. I think, the whole system will feel that concern so that harmony is maintained, equilibrium is maintained in the society. With this, I thank my colleague for bringing in this Resolution. Thank you.

DR. E. M. SUDARSANA NATCHIAPPAN (Tamil Nadu): Thank you, Sir. The Resolution brought forward by Shri Naik is a thought-provoking Resolution. We have to find out why this particular Resolution is to be discussed before the Parliament, what is the situation which warranted bringing forward such a Resolution before the Parliament. We know that the Constitution of India is supreme in India. In U. K., the Parliament is supreme. But the Judiciary and the Executive are helping the Parliament. The Judiciary cannot do anything beyond the law made by the Parliament. In the American Constitution, the situation is different. They have to go according to the written Constitution, and the President has got more powers, that is, he is the Executive President, and the Supreme Court is interpreting the Constitution and the laws. But in India, I feel that it is a very, very minutely made Constitution, which needs a discussion like this

then and there. After 56 years, a Member of Parliament, who was earlier a Lok Sabha Member, and now, a sitting member of the Rajya Sabha, has come forward to move this Resolution before this House. What is the reason for that? What made him to come out with this Resolution? I have not followed his speech earlier. But I could find from the reading of this Resolution that there is some hastiness with the Judiciary to sit on judgement in respect of a law which is made by the Legislature, that is, the Parliament or the State Legislature. But, at the same time, we are not saying that whatever law is made by the Parliament or the State Legislature is supreme. In the beginning of my speech, I said that the Constitution is supreme in India. The Legislature is there to give more meaning to the Constitution, to make laws and rules according to the whims and fancies of the majority of people who vote and elect the Parliament. Therefore, the feelings of the people are reflected through laws made by the Parliament. The Executive is there to execute whatever laws or regulations are made by the Parliament. If these two wings of the State are violating the Constitution, if they are violating the laws, if they are violating the rules, then the court comes into the picture. Till then, the court has no jurisdiction at all to go into the activities of the Parliament or the Executive. Only if there is a violation of the Constitution or if there is a violation of law made by the Parliament or the rule made by the Executive or any such thing, the court can intervene, because we are controlled by the rule of law. Therefore, it is very clear and also interesting to make an academic discussion in respect of article 141. I just quote article 141 of the Constitution. It says: "The law declared by the Supreme Court shall be binding on all courts within the territory of India." This is a very interesting article which says, it is not binding upon the Executive or the Parliament, it is binding upon the courts. Why had such a thing happened? The verdict of the Supreme Court is also used as a law. A law is made by the Parliament. It cannot be made by the Supreme Court or the courts. But it can be interpreted by the Supreme Court. But when the legislative work of the Legislature is brought before the Supreme Court and it goes beyond the jurisdiction or beyond the powers of the Constitution, then, the Supreme Court has got a right to say that you are crossing the boundary of the law which is already made by the Constitution or by our own Parliament. Therefore, the power of the Supreme Court is to give a second label to say that it is the law of the land. But, at the same time, if a dispute arises between the parties or between the individuals or if there is a State *vs.* individual dispute or an

Executive *vs.* individual dispute, then the matter will go to the Judiciary. And at that time, if a law is made by the Supreme Court, that will be binding on all the courts, from the topmost court to the lowest court.

Therefore, Sir, the question is, in which way a law is to be made? What is the necessity for making the law and how to amend it? These are all the works of the Parliament. We know, the Parliament knows the pulse of the people. When the people feel that this is the law to be made for the country, only then we make the law. Suppose we make a law which is not within our power and it is already declared by the Constitution that court by using article 32 or article 226 and seek the help of the Judiciary to say that the Constitution is not violated by a particular body of the State. Sir, at that time, the court can declare that the law made by the legislature or a portion of the law or a particular section made by them is wrong; it is *ultra vires* of the Constitution and it is beyond their jurisdiction.

Sir, at the same time, if we make a big research, we find that despite many of the declarations which were made by the Supreme Court of India or by a high court that the law is wrong, is illegal, is *ultra vires,* we are not striking down, even then the Constitution retains the same law which was already struck down by the Supreme Court. In the same way, there are many laws which were struck down by the Supreme Court but the Executive or the Parliament has not taken the pain to see that it is implemented according to the Constitution. There is a feeling among all the three wings of the State that we need some thinking that even after 56 years of Independence, the Constitution is working very well, but, at the same time, there are small hiccups here and there and that have to be made up. For example, Sir, the highest institution in India, according to the Constitution, is the Parliament, and also the Rajya Sabha. But due to our emotions, we have to react to the media, and we are adjourning the House. We, the law-makers are making a thing, which should be done by us. Simply because we are emotional, we want to reflect the people's mood, therefore, we are not doing the work at a particular time. In the same way, we may be coming forward with some legislation. At that time, it is the Judiciary which sits there coolly. They are sitting there. They are to be nominated or selected or appointed by a warrant of President on the basis of the recommendations made by the Parliament, that is, through the Executive. They have to be appointed to reflect the feelings of the people because the Supreme Court is also sitting only on the feelings of the

people. Before 1993, we were doing like that, but after 1993, the Parliament has now lost its right to appoint a judge. The Parliament, the Government which is the Executive, has lost its right to name that these are the persons who are going to represent the people in the Judiciary. In America, they are having a direct election. The Senate has to approve the names of the Supreme Court judges. They have to approve the names of Chief Justice of the Supreme Court. But we are having a very technically, properly made Constitution where the judges also represent the people through a very minute, very delicate selection process which is made according to the Constitution and which was practised till 1993 successfully. But after the court's verdict the Executive is hesitating and the Parliament is also hesitating to touch it. It may bring up some other problems. But, at the same time, this particular Resolution reflects on it. This particular Resolution reflects on the fact that we can't accept a two-Judge Bench sitting there and saying what the Parliament has done or that the law made by the Parliament is unconstitutional.

Sir, a Constitutional amendment is made by the Parliament by two-thirds majority in both the Houses. Then it goes to all the States of India where two-thirds of the Assemblies ratify it by two-thirds majority. After that it goes to the President of India for assent. Then only it becomes an amendment of the Constitution. But simply two Judges or three Judges sitting in the Supreme Court can say that a particular amendment is unconstitutional. This particular Resolution wants to give a red signal. A time has come when the Parliament has no say in the selection of Judges and the Executive has no say in the selection of the Judges. It has been done by the Judges themselves. How many members are there in the collegium? It is a collegium of three Judges of the Supreme Court or three Judges of a High Court. Three Judges of a High Court are selecting the names. They are sending it. It is vetted by the Executive. Then it goes to the Supreme Court. They are selecting the Judges. They decide the numbers. They send it to the Executive. The Executive can change the numbers. But they have to send it to the President of India. But what is the base of this particular person? What is the background of this particular person who is going to sit as a Judge in a Constitutional Bench and who is going to say that a particular law is wrong? Do we have a right to say like that? Yes, we were having it earlier. A majority of the Members of Parliament had elected Prime Minister of India and the then Cabinet had taken a

decision. A decision should be taken properly by the Cabinet through the Departments and then it should be placed before the Judiciary. The Judiciary should go through it and see whether it is valid, and it should recommend it to the President of India.

[MR. DEPUTY CHAIRMAN *in the Chair.*]

When that is the position, what has happened? A person, who is not at all known to the Parliament, who is not at all known to the Executive, is being selected as a Judge by three persons!

Sir, we can't comment upon the Judiciary. At the same time, it has come in the media. In today's newspapers you might have read how the appointment of a Chief Justice was commented in the media. A collegium of three members have expanded themselves into four members. Out of the four members, three members dissented on the appointment of a particular person. But finally a decision was taken and it is being implemented. That is the main reason, I feel, why this Resolution wants to say that you are making a separate Judiciary which is not accountable to anybody. It is not at all accountable to the Parliament; it is not at all accountable to the Executive; more so, it is not accountable to the people. The situation is such where a two-Judge Bench or a three-Judge Bench can easily declare any law *ultra vires*.

Sir, I have already mentioned that many of the Constitutional provisions, which were already declared as *ultra vires* have not been removed from the Constitution or the law books. The law books and the Constitution retain those provisions which were already declared as *ultra vires* by the courts. They still exist. They are alive. It will become a controversy when this position is challenged before the Supreme Court by way of a petition. Then, they will say, "We have already declared it as *ultra vires* and, therefore, this particular provision can't be binding on us". It is illegal. Therefore, duality is being maintained in this nation. It is high time when we have to find out in which way we can work more and see that the Constitution is protected by all the three wings of the Constitution.

Sir, this Resolution also reflects upon another thing. According to article 145 of the Constitution, Parliament has got the right to make laws. Article 145(1) says, "Subject to the provisions of any law made by Parliament, the Supreme Court may from time to time, with the approval of the President,

make rules for regulating generally the practice and procedure of the Court including..." Therefore, the Parliament can make law and that has to be followed by the Supreme Court. In the procedural law, the Supreme Court can make its own procedure, but at the same time, Parliament has also got the right to give the procedure. This Resolution only talks about the procedural law which has to be made under article 145(1). This Resolution has made people to think a lot about it. We have to wake up to the call of the nation that whether the Parliament is ready to amend the procedures which are followed by the Supreme Court for the selection of judges, for making its own Benches, for making its own procedures. These are the things. Without any bias, without any political mind, we can sit here in this forum and decide that this is what the people want. Post-93, a lot of things have come up in the appointment of judges. Many of the judges have come from their own families, from their own Chamber, who were their juniors, from their own friends. Many of the social justices were not reflected at all in the judicial appointments. Only the people belonging to the elite group, who are, more or less, known as intellectuals, people belonging to a certain section are coming up. They are interpreting the law, which are made for the ordinary people. We, as a nation, have successfully constituted Parliament fourteen times. Governments have come and gone and have made many laws which were reflected upon each and every election. In every election, a politician, a Member of Parliament has to stand before the people and say, "I have done this for the last so many years. This is what I have done for the nation. This is the thing which I have done for the people. Therefore, vote for me and vote for my party." That is the accountability which we are discharging each and every time whenever elections are held. Where is such accountability for the judiciary? If a judge has gone into the Bench at the age of 35 years, he can be there for many years. Then he will be automatically elevated to Chief Justice. Then if he has got some push and pull, he will be elevated to the Supreme Court and he will be there for three to five years. A certain judge has sat for more than this period as Chief Justice of India. They are interpreting laws without knowing the mind of the people. There is a great need to fix accountability on the judiciary. We don't have to think about it on political basis, we have to think about it on the basis of protecting the Constitution. Parliament has got the right to protect the Constitution.

The Executive has got the right to protect the Constitution. The President of India has got the right to protect the Constitution. The judiciary is also having the right to protect the Constitution. It is not the judiciary alone which has to protect the Constitution, it is the work of all the wings of the Constitution to protect it. Our Constitution is the best. It has been properly practised, even though we made several amendments to reflect upon people's minds. For example, our Parliament has made amendments 92-93 times, but amendments are made only on the basis of the feelings of the people, to address the needs of the people, and also to implement the provisions of the Constitutttion. For example, we amended articles 15 (4) and 16 (4) because we wanted social justice. It is the backward class citizens, not the caste, which ought to be protected. That is the original concept of the Constitution which we are implementing. But we are getting such comments from the judiciary saying that Parliament can do anything and they can make any law! Such are the comments that we are getting from them. But Parliament has got its own rights according to the Constitution. Also, we, as Members of Parliament, have a greater amount of freedom of speech, which is provided for the Constitution itself because we, as representatives of the people, put forth the feelings of the people before Parliament reflecting the people's minds. Sir, this legislation is not an ordinary legislation; according to me, it is a historical legislation, which has been brought by way of Private Member's Resolution. But I feel that there should be a more detailed discussion on this particular topic. It is time for us to stress upon the fact that while Executive has got certain accountability and Parliament has got its accountability, the Judiciary also must have accountability. One of the hon. Members commented upon orders made in particular case where monkeys of a particular area had to be shifted away from that place. I just want to comment on it. Who is responsible for it? Actually the Executive, the local Minicipal Corporation, is responsible. Now, if they are not doing the work, the society has got a right, every individual citizen has got a right to approach the court and say, "I want to live peacefully, but the monkeys are disturbing my life. and, the Executive is not doing their work. Therefore, why don't you issue a writ upon them?" Then the Court issues a writ and gives direction to them. I can cite here another sensitive example of the Delhi shopping complex system. There is the Central vigilance Commission. We have made a law to the effect that if a particular executive member, who is an official, does not discharge

a particular duty properly, or, is violating his powers for some other means, then, the CVC can inquire into it, prosecute them, and see to it that the system works properly and the laws are executed accordingly. Sir, in Delhi, for the last 20 years, there have been violations of the laws plenty of time. But the officials of the Corporation are not being made accountable for that. How much of a problem we have faced on that account, and how much money has got wasted on account of various violations. Nothing happens until there ia a writ petition in the court by way of a public Interest Litigation. They say that everything has to be according to the law. Now the law cannot take its own way; they have to interpret what is in the law which is already in existence. Therefore, there is a confusion in the mind of the people as to whether a particular Executive's action is wrong, or, whether the law which is already in existence, is not proper and whether it has to be amended properly. This is the problem we face, and, at that time, the judiciary takes a stand and pushes other cases out. But they take a longer time in disposing of the Public Interest Litigation itself. Sir, this Public Interest Litigation is a novel idea which came up only in the 80s. Before that there was no provision enabling a person to challenge an Executive Order which reflects upon the entire country. But now anybody can challenge any action taken by the Executive by way of a Public Interest Litigation. The entire executive machinery has come to a standstill now because of a stay order given in respect of a PIL. Why I am giving these examples is that this is high time to sit, decide and remove the hurdles. We have to repair our machinery. The machinery is good but there are some problems here and there. Those problems have to be looked into by the concerned authorities. We, the Members of Parliament, have got the right to find out which part of the machinery has gone wrong. We have to remove that part, just like we do in our modern cars, without any tinkering. Nowadays, they just replace the defective part. Now, whether that type of a law has to be made or whether we have to do some tinkering here and there or whether we can put some screws here and there, or whether some extra lights can be put and so on, has to be decided by the Parliament. That is why this Resolution has got some weight. Hon. Members can come out with their ideas and the Government can also reply on these lines.

While concluding, I would like to submit that our constitution has been working for the past fifty six years. This has been debated at different forums. Sir, it is the best Constitution. But, so far as its working is

concerned, it is not proper here and there and it can be rectified. Sir, this Constitution, which is the best, can give us the best administration, the best management, the best Judiciary, the best Executive and also the best Parliament for India.

प्रो॰ राम देव भंडारी (बिहार): माननीय उपसभापति जी, मैं श्री शान्ताराम लक्ष्मण नायक द्वारा उपस्थापित इस संकल्प की भावना और उद्देश्य के साथ अपने को सम्बद्ध करता हूं।

महोदय, अभी डा॰ नाच्चीयप्पन साहब बोल रहे थे, उन्होंने कहा कि आखिर कौन सी परिस्थिति आई कि इस संकल्प को उपस्थापित करना पड़ा? महोदय, मुझे भी इस सवाल का जवाब नहीं मिल रहा है। आज से बरसों पूर्व इस प्रकार के सवाल नहीं उठते थे, लेकिन इधर ऐसे सवाल भी आने लगे हैं कि संसद बड़ी है या न्यायपालिका? इस प्रकार के सवाल भी समाचार पत्र में आने लगे हैं। महोदय, संविधान में स्पष्ट रूप से न्यायपालिका की विधायिका की व्याख्या की गयी है उनके अधिकारों व कर्त्तव्यों की व्याख्या की गयी है। मैं समझता हूं कि अगर सभी उन्हें प्राप्त अधिकारों के तहत अपनी सीमाओं में रहकर काम करें तो कहीं कोई टकराव की स्थिति नहीं बनेगी। संसद को कानून बनाने का अधिकार है, संसद कानून बनाती है और न्यायपालिका उसका विश्लेषण करती है। उस विश्लेषण के आधार पर कोर्ट में जो मामले आते हैं, उनका वह फैसला करती है। इस में कहीं कोई टकराव का सवाल नहीं उठता है। मगर इसके बावजूद भी इधर कई ऐसे कानून बने हैं जिन्हें कोर्ट के द्वारा या तो निरस्त कर दिया गया है या अलग प्रकार की टिप्पणी की गयी है। फिर सवाल बड़े या छोटे का उठ जाता है।

महोदय, हम सभी संसद में-लोक सभा में या राज्य सभा में चुनकर आते हैं। हम जनता को रिप्रजेंट करते हैं, कोई सौ, दो सौ जनता को नहीं, एक लोक सभा सदस्य 20-25 लाख लोगों को रिप्रजेंट करता है। हम समाज की वास्तविकता या ग्राउंड रियलिटी को अच्छी तरह से समझते हैं। हम कानून बनाते हैं जो बिल हमारे सामने आते हैं, उस पर बोलते हैं जो समाज की वास्तविकता है देश की वास्तविकता है, वह हमारे सामने होती है। हम चाहते हैं कि देश की जनता का प्रतिनिधित्व कानून में भी हो। मगर कोर्ट में नियुक्ति की जो प्रक्रिया है, जो व्यवस्था है, मैं महसूस करता हूं कि जनता का सही स्वरूप वहां तक नहीं पहुंचता। यह कोर्ट तक पहुंचे, ऐसी व्यवस्था नहीं है। देश में 25 प्रतिशत से अधिक शैडयूल्ड कास्ट और शैडयूल्ड ट्राइब के लोग हैं, बड़ी संख्या में पिछड़े वर्गों के लोग हैं, माइनॉरिटी के लोग हैं। गरीबों की बहुत बड़ी संख्या अपने देश में अभी भी है। अगर कोर्ट में गरीबों की भावनाएं नहीं पहुंचे, हमारे देश के जो दलित हैं, उनकी भावनाएं नहीं पहुंचे, देश की ग्राउंड रियलिटी है, वास्तविकता है, वह ज्यूडिशियरी के सामने नहीं होगी, तो सिर्फ किताबी आधार पर फैसला करने से जनता की जो आकांक्षा है, जो जनता चाहती है, उसे पूरा नहीं किया जा सकता।

मैं देख रहा था, अभी सुप्रीम कोर्ट में 25 हजार से अधिक मुकदमे पेंडिंग हैं, लगभग 35 लाख मुकदमें हाइकोर्ट्स में तथा ढाई करोड़ से ज्यादा सैशन कोर्ट्स और लोअर कोर्ट्स में पेंडिंग हैं। उनका निपटारा नहीं हो रहा है। मैं उसके कारणों में नहीं जाना चाहता। आज एक पी०आई०एल० फाइल कर दी जाती है, अगर वह पी०आई०एल० कहीं किसी मंत्री से सम्बन्धित हो या किसी सांसद से सम्बन्धित हो, तो ज्युडिशियरी की नजर बहुत जल्दी उस पी०आई०एल० पर पड़ती है। अखबारों में पी०आई०एल० के बारे में बड़े-बड़े समाचार छपते हैं। अब ज्युडिशियरी को भी लगने लगा है कि उनके बारे में भी बात छपनी चाहिए। इस प्रकार कोर्ट पी०आई०एल० का जल्द निपटारा या सुनवाई करती है। कोर्ट्स में करोड़ों मुकदमे पेंडिंग हैं, उनके लिए थोड़े-बहुत फास्ट ट्रैक कोर्ट्स बने हैं, लेकिन बहुत कम संख्या में बने हैं, मैं चाहूंगा कि सरकार फास्ट ट्रैक कोर्ट्स की संख्या बढ़ाए।

महोदय, मैं गांव से आता हूं। मुझे अनुभव है अगर गांव के किसी गरीब आदमी पर मुकदमा हो जाए या उसे मुकदमा करना पड़े, सुप्रीम कोर्ट का तो सवाल ही नहीं उठता। सुप्रीम कोर्ट तक जाने के लिए वह कहां से लाख-दो लाख रुपए लाएगा, वकीलों से पैरवी कराने के लिए। शायद एक डेट पर 50 हजार या एक लाख लग जाते हैं ,दो, तीन या चार डेट्स का तो सवाल ही नहीं उठता है। सुप्रीम कोर्ट तक तो वह पहुंच नहीं पाएगा। हाई कोर्ट में जाने की स्थिति भी नहीं होती है। महोदय, मैं ज्युडिशियरी पर कोई चार्ज नहीं लगा रहा हूं मैं करॅप्शन की बात कर रहा हूं। लोअर कोर्ट का हमारा अनुभव है। जब घर जाते हैं, को कोर्ट में जाते हैं। मेरे मित्र हैं, जो वहां काम करते हैं लोअर कोर्ट में rampant-अंग्रेजी का जो rampant शब्द है, वह मैं व्यवहार करना चाहता हूं-rampant करॅप्शन है। अब तो ऊंची अदालतों के बारे में भी समाचार पत्रों में, पत्रिकाओं में कभी-कभार समाचार आते हैं। जहां करॅप्शन हो, जहां सोशल जस्टिस की बात नहीं हो, जहां पूरे देश को रिप्रजेंट करने वाली ज्युडिशियरी नहीं हो और जनता की जो ग्राउंड रियलिटी है, उसको जानने वाली ज्युडिशियरी नहीं हो, तो मैं समझता हूं कि वहां से आम लोगों को न्याय मिलने में कठिनाई होगी। मैं तो सरकार से कहूंगा कि इन समाजों का भी रिप्रजेंटेशन ज्युडिशियरी में निश्चित रूप से होना चाहिए। एक कहावत है कि "जिसके पैर न फटे बिवाई, वह क्या जाने पीर पराई"। जिसको खुद दर्द नहीं होगा, वह दूसरे का दर्द महसूस नहीं कर सकता है। कोर्ट का एक फैसला है कि चांदनी चौक के आसपास से सभी रिक्शों को हटा दिया जाए। उनको कहां मालूम है कि उत्तर प्रदेश और बिहार से लाखों की संख्या में लोग यहां आते हैं, उनके पास अगर कोई काम नहीं होता है एक रिक्शा लेकर उसे चलाने लगते हैं, 50-100 रुपए दिन के कमाते हैं जो कमजोर वर्ग के लोग हैं, नौकरी-पेशा वर्ग के लोग, जिनकी आमदनी ज्यादा नहीं है, जो टैक्सी पर या थ्री व्हीलर पर नहीं जा सकते, जिनको एक-दो किलोमीटर जाना होता है, उनके लिए रिक्शा एक सस्ती सवारी होती है। वे रिक्शा से चले जाते हैं। लेकिन जो कोर्ट का

निर्णय आया, इस निर्णय से लाखों गरीब लोग बेकार हुए हैं, साथ ही एक सस्ती और सुलभ सवारी, जो कम आमदनी वालों के लिए तथा एक-दो किलोमीटर चलने वालों के लिए होती थी, वह बंद हो गई है। सीलिंग के बारे में बहुत चर्चा हो रही है। महोदय, एकाएक ऐसा फैसला कर दिया जाए कि जो दुकान या मकान बरसों से हैं, लीगल हैं या इलीगल हैं, मैं इसमें नहीं जाना चाहता, उसे एक या दो महीने के अंदर इसे उठाकर ले जाने का आदेश देंगे तो वे कहां ले जाएंगे। फैक्ट्रियों के बारे में एकाएक एक निर्णय हुआ था कि सभी फैक्ट्रियों को शहर से बाहर ले जाएं। मैं कहना चाहता हूं कि इस प्रकार के निर्णय आनन-फानन में नहीं दिए जाने चाहिए। आप निर्णय देते हैं तो उससे पहले विकल्प देना चाहिए। आप विकल्प दे दीजिए-आप रिक्शा चलाने वाले को नौकरी दे दीजिए। आप दुकान हटा रहे हैं, उससे पहले उसे दुकान की व्यवस्था कर दीजिए। इस प्रकार के जो निर्णय होते हैं, वे जनहित के नाम पर होते हैं। पार्लियामेंट कानून बनाती है, बहुत सोच-समझकर बनाती है। सदन में भी देश के जाने-माने प्रतिष्ठित अधिवक्ता हैं, विद्वान अधिवक्ता हैं, दूसरे सदन में भी हैं। सदन में ऐसे लोग नहीं आते हैं जिनको कानून की जानकारी नहीं होती। बड़े-बड़े वकील, ऐडवोकेट्स यहां आए हुए हैं ऐसे-ऐसे विद्वान यहां हैं, जिनको अनुभव है, जानकारी है, वे कानून बनाते हैं। महोदय, संसद की अपनी डयूटी है, अपने अधिकार हैं, ज्यूडिशियरी के अपने अधिकार हैं, अपनी ड्यूटी हैं। लक्ष्मण रेखा की चर्चा बहुत होती रहती है। कहना चाहूंगा कि जो लक्ष्मण रेखा है एक दूसरे की, उसको कभी लांघा नहीं जाना चाहिए।

महोदय, मैं अपनी बात समाप्त करने से पहले एक बार फिर से कहना चाहूंगा कि सरकार को, ज्यूडिशियरी को निश्चित रूप से इस पर विचार करना चाहिए कि कोई एक-दूसरे के अधिकार का हनन न करे। ज्यूडिशियरी में देश का सच्चा स्वरूप होना चाहिए। गरीब लोग भी ज्यूडिशियरी में हैं, जो गरीबों की पीड़ा जानते हैं, शैडयूल्ड कास्ट, शैड्यूल्ड ट्राइब के लोग भी हों, अल्पसंख्यक लोगों को भी उसमें होना चाहिए। लालू प्रसाद जी जब बिहार के मुख्य मंत्री थे, तो उन्होंने ज्यूडिशियरी में भी आरक्षण की बात की थी। डिस्ट्रिक्ट लैबर कोर्ट तक ज्यूडिशियरी में भी आरक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए। हाई कोर्ट ने उसे नहीं माना, बात वहीं खत्म हो गई उस सरकार का बहुत अच्छा प्रस्ताव था। कई क्षेत्रों से बार-बार इस प्रकार की मांग उठती रहती है। आज के परिप्रेक्ष्य में, आज के संदर्भ में हमारे देश का जो सामाजिक स्वरूप है, उसमें इसकी बहुत आवश्यकता है। सरकार को संविधान में जो संशोधन करना पड़े, करना चाहिए ताकि ज्यूडिशियरी सही रूप में इस देश का प्रतिनिधित्व करे, पूरे समाज का प्रतिनिधित्व करे। जिसको इस देश की ग्राउंड रिएलिटी, वास्तविकता की जानकारी होगी, व्यावहारिकता की जानकारी होगी और ज्यूडिशियरी में उसी आधार पर फैसला होगा। कोई कारण नहीं है कि विधायिका एवं न्यायपालिका में किसी प्रकार का टकराव हो। इन्हीं शब्दों के साथ, मैं इस संकल्प की भावना एवं इसके उद्देश्य का समर्थन करता हूं। बहुत-बहुत धन्यवाद।

श्री श्रीगोपाल व्यास (छत्तीसगढ़): उपसभाध्यक्ष महोदय, धन्यवाद। मुझे एक बहुत ही गंभीर

विषय पर इस सदन में चर्चा का अवसर मिला है। संसद सदस्य होने के नाते, संसद की गरिमा या संसद के महत्व को कोई भी सदस्य झुठला नहीं सकता। संविधान के अनुरूप संसद का अपना एक स्थान है, इसलिए उस पर किसी प्रकार की टिप्पणी करने की मेरी भावना नहीं है। परंतु मैं यह सोचता हूं कि जब यहां पर हम शब्दों का प्रयोग करते हैं तो जाने-अनजाने, गहराई में जा कर यदि हम अपनी न्यायपालिका की कार्य पद्धति पर टिप्पणी करते हैं, तो क्या यह हमारे लिए उचित है? यह सोचने की आवश्यकता है। मैं नहीं जातना हूं कि इसके पीछे मान्यवर शान्ताराम जी का उद्देश्य क्या है, यह उनके अकेले का है अथवा कई लोगों का मिल कर है, मुझे यह सब नहीं मालूम है। उनके नाम में 'शान्ता' भी है और 'राम' भी है, इसलिए मैं आशा करता हूं कि उनका उद्देश्य पवित्र ही होगा। ...(व्यवधान)...

एक माननीय सदस्य: उनके नाम में 'लक्ष्मण' भी है।

श्री श्रीगोपाल व्यास: जी हां, लक्ष्मण भी है। सब होते हुए भी, शान्ताराम जी, आज सहसा सहमत होने का दिल नहीं कर रहा है ...(व्यवधान)...

श्री शान्ताराम लक्ष्मण नायक (गोवा): मैं आपको यह जानकारी भी दे दूं कि मेरी मां का नाम भी 'सीता' है।

श्री श्रीगोपाल व्यास: जैसा कि प्रोफैसर साहब कह रहे थे, मैं नहीं जानता हूं कि प्रोफैसर साहब की ऐसी कौन सी विवशता आ गई है कि यह जानते हुए भी कि आज यह क्यों लाया जा रहा है, वह इसका समर्थन कर रहे थे। कुछ लोग जब पीआईएल के बारे में बोल रहे थे, उससे उनको या किसी और को क्या पीड़ा हो रही है, मुझे यह नहीं मालूम। यहां पर मैं आपको पहले स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि मैं किसी के प्रति कोई असम्मान की भावना नहीं रख रहा हूं, सदन के लिए तो कतई नहीं। जिस समय किसी ने कहा कि बहुत सारे पी आई एल आ रहे हैं, मुझे ऐसा लगा कि पीआईएल के बाणों से किसी कर्ण के रथ का कोई पहिया फंस गया है। यह क्या मामला है? इससे क्या पीड़ा है? यदि हम जनता का प्रतिनिधित्व करने का दावा करते हैं या हम यह समझते हैं कि हमने उनकी पल्स पर हाथ रखा है, ऐसे में उसी जनता को न्याय दिलाने के लिए यदि कुछ लोग याचिका करते हैं तो मैं सोचता हूं कि इतना अनुदार हो कर किसी को टिप्पणी नहीं करनी चाहिए। वे कैसे हों, क्या हों, कितनी मात्रा में हों, कौन रखे इस पर तो चर्चा हो सकती है, लेकिन उसके बारे में कोई अनुदारता बरतना उचित नहीं होगा। अभी प्रोफैसर साहब ठीक ही कह रहे थे, मैं उनसे सहमत हूं कि यह जुडिशियरी में भी होना चाहिए। हम लोग बार-बार यह कह रहे हैं, हम जिस आम जनता की बात कर रहे हैं, यदि आप उसके पास जाएंगे तो मैं नहीं जानता हूं कि उसकी कोई पद्धति हो सकती है। इसके बारे में नाईक जी सोचेंगे।

आजकल एक तरीका चला है, जिससे टेलीविजन पर समाचारों को लाइनों में ढूंढना पड़ता है, पूरे स्क्रीन पर तो पता नहीं क्या-क्या आता रहता है। समाचार ढूंढने के लिए नीचे की पंक्तियों में आंख गढ़ानी पड़ती हैं, कोई समाचार मिलता ही नहीं है क्योंकि विज्ञापनों से स्क्रीन भरी रहती है। जो भी हो, उसमें एक पद्धति निकली है, जिसमें यह पूछा जाता है कि किसी खिलाड़ी को टीम में आना चाहिए या नहीं आना चाहिए, इसके बारे में अपना अभिमत दीजिए। बाद में बताया जाता है कि इतने लोगों ने इसके पक्ष में मत दिया या इतने लोगों ने इसके विरुद्ध मत दिया। मैं संसद में नया हूं इसलिए मुझसे कोई ऐसी टिप्पणी हो जाए तो मैं क्षमा भी मांग लूंगा। परन्तु मैं सोचता हूं कि यदि ऐसा कोई सर्वेक्षण आज कराना चाहते हैं कि जुडिशियल एक्टिविज्म और पॉलिटिकल एक्टिविज्म इन दोनों की तुलना का यदि आप सर्वेक्षण करेंगे तो इस देश की जनता क्या कहेगी, जरा सोचिए। पॉलिटिक्स के आधार पर चलाना ठीक है। पॉलिटिकल एक्टिविज्म के आधार पर चलाना ठीक है, क्या? अभी जुडिशियल एक्टिविज्म की बात कही गई है। मैं नहीं समझता हूं कि माननीय सिब्बल साहब क्या सोच रहे होंगे, वे न्याय के महान जानकार हैं, परन्तु श्रद्धेय जय प्रकाश जी ने क्या कहा था मैं आपको याद दिलाना चाहता हूं। जय प्रकाश जी ने कहा था तत्कालीन प्रधान मंत्री जी से कि यह याद रखना कि हो सकता है कि इस देश का आम आदमी प्रजातंत्र की परिभाषा नहीं जानता होगा किन्तु यह याद रखना कि वह उचित और अनुचित का अन्तर जानता है। भारत का कोई संविधान मैं उसके लिए नमन तो करता हूं उसके अपनाने के पहले के हजारों वर्षों से हमारे महान मनीषियों ने यह उचित और अनुचित का निर्णय उसके हृदय में स्थापित किया है। हम भी बार-बार लक्ष्मण रेखा की बात क्यों करते हैं और कोई रेखा नहीं सूझती है। मेकमोहन का नाम तो नहीं लेते हैं, लक्ष्मण ही क्यों सूझता है। राम का ही राज्य आदर्श के नाते क्यों माना जाता है, यह सब चिंतन के विषय होने चाहिए। इससे पहले कि हम कोई जुडिशियल ऑप्टिमिज्म पर अपनी कोई टिप्पणियां करें हम सब को उन महान आदर्शों को सोचना होगा जिसके आधार पर स्वस्थ राजनीति चलनी चाहिए। आप और हम सभी इस बात के साक्षी हैं कि केवल संख्या बल पर यदि कोई निर्णय होता है तो सोचिए, शायद हम में से कइयों को लगता होगा कि ठीक नहीं हो रहा है। पर संख्या बल पर निर्णय हो रहा है। अभी गत दिनों में हम सभी ने मिलकर चूंकि मैं सदन में हूं, जिन लोगों ने सदन के उचित मापदंडों पर आचरण नहीं किया था उनकी सदस्यता बनाए रखने के लिए कदम उठाए, चिंता की बात है। हम उसके लिए कानून बदलना चाहते हैं। हम अपने अंतकरण से टटोलें कि यह हमारी प्रजातंत्र की गरिमा के अनुकूल है क्या? क्या केवल संख्या के बल पर सत्य स्थापित होगा। मान्यवर उपसभापति जी, मैं जब यहां ट्रेनिंग के लिए आया था मैंने एक बहुत अच्छा श्लोक पढ़ा था, वही कह कर समाप्त करुंगा। वैसे आप मेरी ओर अच्छी नजर से ही देखते हैं।

श्री उपसभापति: मैं आपको गौर से सुन रहा हूं।

श्री श्रीगोपाल व्यास: यह संस्कृत का श्लोक है

''नसा न सभा यत्र न सन्ति वृद्धा:
वृद्धा न ते ये न वदन्ति धर्मम्
धर्म: स नो यत्र न अस्ति सत्यम,
सत्यं न तद्यच्छलमभ्युपैति।

जहां छल है, वहां सत्य नहीं रह सकता है। वास्तव में कोई व्यवस्था में गड़बड़ नहीं होती है। मनुष्य कैसा है, उसका चरित्र कैसा है वह व्यक्ति और सृष्टि में किस प्रकार से भेद करके आचरण करता है, अपने खुद के हित को छोड़कर समाज के हित के लिए काम करता है या नहीं, यह बड़े महत्व की बात है। इस पर हम सब का ध्यान जाना आवश्यक है। हम इन बातों पर सोचें, तब हमको यह ध्यान में आएगा। मुझे यदि अवसर मिला होता मैं नायक जी आपसे जरूर बात करता कि यह क्यों ला रहे हैं, पर वह अवसर नहीं मिला। मैं समझता हूं कि आपकी मूल भावना पवित्र ही होगी। परन्तु आज उससे सहमत नहीं हुआ जा सका है। क्या हम इस विचार को जनता के बीच में लाएंगे? उसका मत जानने की कोशिश करेंगे आम आदमी, आज जो राजनीति का या हम सभी का आचरण है, उसकी तुलना में जुडिशियरी के आचरण को कैसा समझता है, ऐसे अनेक प्रसंगों को हम कम्पेयर करेंगे, उनकी तुलना करेंगे तो हमको बहुत कुछ सोचना पड़ेगा। इसलिए मेरा निवेदन है कि इसको व्यापक जनता की चर्चा के लिए बिखेरा जाए। हम जिस जनता की दुहाई दे रहे हैं, उनका मत जानने का कोई न कोई माध्यम, मैं अपने संसदीय कार्य मंत्री जी की ओर देखकर बोल रहा हूं, वह तो किसी जरूरी काम में व्यस्त हैं, सोचना पडेगा।...(व्यवधान)...

कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय में राज्य मंत्री तथा संसदीय कार्य मंत्रालय में राज्य मंत्री (श्री सुरेश पचौरी): मैं आपको सुन रहा हूं।

श्री उपसभापति: वह आपको सुन रहे हैं। वह आपको गौर से सुन रहे हैं।

श्री श्रीगोपाल व्यास: हमें इस बात को गौर से सोचना पड़ेगा कि हम इतने गंभीर विषय पर जिसके बारे में जनता के हम प्रतिनिधि हैं, इसको मान लिया, परन्तु हम कैसे यहां पहुंचते हैं, क्या-क्या होता है, जनता क्या सोचती है, ऐसी अनेक बातों पर चिंतन करने की आवश्यकता है और जिन राम जी की हम दुहाई दे रहे हैं, उन्होंने क्या कहा, वह भी मैं आपको बता देता हूं। एक व्यक्ति ने इस देश में स्वयं भगवती सीता पर टिप्पणी की थी और क्या हुआ था, हम सब जानते हैं। उनके संबंध में कहा है,

''स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि
आराधनाय लोकस्य मुच्चतो नास्ति मे व्यथा''

भगवान हम सबको इस पर विचार करने की, निर्णय करने की क्षमता दें। इसलिए मैं समझता हूं कि इस गंभीर विषय पर जनता के मतों का भी आह्वान करना ठीक रहेगा। नाईक जी, हो सकता है, यदि उसके पीछे और कोई उद्देश्य नहीं हुआ, और कोई रथ का पहिया न फंसा होता, तो कभी-न-कभी आपकी बात का समर्थन करने के लिए जरूर खड़ा होऊंगा। धन्यवाद।

श्री जयप्रकाश अग्रवाल (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली): उपसभापति महोदय, आपका बहुत-बहुत धनयवाद। मैं मान सकता हूं कि आप सामने बैठे हैं और आपको नायक साहब के प्रस्ताव की मुखालफत करनी है। शायद यह प्रस्ताव, अगर आप ध्यान से उनके शब्दों पर जोर देते और फिर पढ़ते और फिर बोलते, तो शायद जो शब्द आपने इस्तेमाल किए हैं, उनको नहीं करते और जो राय आपने रखी है, वह और साथियों के साथ मिलकर नहीं रखते। क्या प्रस्ताव है और क्यों लाया गया और कब लाया गया, ये दोनों चीजें बहुत जरूरी हैं।...(व्यवधान)...

श्री श्रीगोपाल व्यास: मैंने कहा कि मैं आज सहमत होने की स्थिति में नहीं हूं।...(व्यवधान)...

श्री जयप्रकाश अग्रवाल: क्या आपने समर्थन किया कि आप इससे सहमत हैं?...(व्यवधान)...

श्री श्रीगोपाल व्यास: मैं आज सहमत होने की स्थिति में नहीं हूं।...(व्यवधान)...

श्री उपसभापति: आज वह सहमत नहीं हैं।...(व्यवधान)...

श्री श्रीगोपाल व्यास: वह मैंने बताया है। जब आप इस बात पर सोचेंगे?...(व्यवधान)...

श्री उपसभापति: अब यह जरूरी नहीं है रिकार्ड देखने के लिए।...(व्यवधान)...

श्री मंगनी लाल मंडल (बिहार): व्यास जी, संस्कृत के विद्वान हैं, वह कानून के विद्वान से बात करेंगे, तभी तो पार्टी का स्टैंड मालूम होगा।...(व्यवधान)...

श्री जयप्रकाश अग्रवाल: नायक जी, आप जो प्रस्ताव लाए हैं, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूं। आप इसको सही समय पर लाए हैं। इस समय पूरे हिन्दुस्तान में एक सोच है कि हम किस दिशा में जा रहे हैं। कई ऐसे फैसले हुए हैं, कई ऐसी बातें हुई हैं, जिनसे टकराव की स्थिति पैदा हुई है। ऐसा नहीं है, मैं जब दिल्ली के बारे में बोला था, तब भी मैंने कुछ मिसालें ऐसी दी थीं, जिनसे लगता था कि शायद हमें छोटा करने की कोशिश हो रही है, शायद हमारी सोच से इत्तेफाक नहीं हो रहा है, कौन-सी बॉडी और इंस्टीटयुशन बनी हैं, उसको क्या काम करना है, शायद वे वह काम नहीं कर रहे हैं। इससे पहले कि आप उठकर जाएं, मैं आपको एक शेर सुनाना चाहता हूं जो मैंने उस दिन भी सुनाया था वह शेर यह है:

यूं तो सलाम करना वाजिब है जरूर,
मगर इतना न झुको कि दस्तार गिर जाए।

हम छोटे नहीं हैं। यहां से कानून बना है, हम कानून बनाने वाले हैं। हमें आजादी मिली। आज़ादी के बाद हमें फैसले लेने का और अपने हिन्दुस्तान को बनाने का और चलाने का अख्तियार मिला। कॉस्टीटयूशन है, कॉस्टीटयूशन से पार्लियामेंट भी बनी है, कॉस्टीटयूशन से ज्यूडीशियरी भी बनी है, एग्जीक्यूटिव भी बनी है। आज जो कानून बनाने वाले हैं, उनके कानून में कोई तबदीली करे या हेर-फेर करे, वह हमें मंजूर नहीं है और यही बात शायद आपने कही है। जो शब्द आपने रखे हैं, बहुत अच्छा रेजोल्यूशन आपका है। यहां बैठकर हमारी भावना लोगों के प्रति जागरूकता के साथ है। यहां हम चुनकर आते हैं-लोक सभा में सीधे आम जनता से चुनकर आते हैं, हम असेंबलियों से चुनकर आते हैं, लेकिन भावना तो वही है कि हमारे देश में नीचे रहने वाला, सड़कों पर काम करने वाला जो इंसान है, जिसकी आस्था हमारे अंदर है, वह हमारे बारे में क्या सोचता है और हमसे क्या चाहता है। वह हमसे यह चाहता है कि हम अच्छे कानून बनाएं ताकि उसको फायदा हो। हम ऐसा कानून बनाएं जिससे उसको राहत मिले और इंसाफ मिल सके। अगर हम कानून बनाते हैं और उस कानून के साथ छेड़खानी होती है या उसको कमजोर करने की कोशिश की जाती है तो उसके लिए यह रेजोल्यूशन बहुत जरूरी है कि हमारे पास किए हुए रेजोल्यूशन को कोई एक आदमी, किसी फिल्मी ग्राउंड के ऊपर, flimsy ground के ऊपर डिक्टेटराना तरीके के साथ यह न कह दे कि मैं इसे नहीं मानता और मैं इसे मानने के लिए बाध्य नहीं हूं। यही हुआ। मुझे उस बात का दुख है। शायद मैंने कभी ऐसा सोचा भी नहीं था। मैंने यहां पर उस दिन कहा था कि अखबारों में यह चर्चा हो रही है कि जो हम पास करके भेजने वाले हैं, वह शायद कोर्ट मानेगी या नहीं मानेगी। हमारे तीन विंग हैं, अभी आपने कहा। अगर वे तीनों विंग मिलकर काम करेंगे , अपने दायरे में काम करेंगे तो एक अच्छा हिन्दुस्तान बनेगा और लोगों को इंसाफ मिलेगा। लेकिन जब हम अपने दायरे से बाहर निकल जाएंगे, ऐसा पहले हुआ भी है, शायद हमें बचपन में जो इतिहास ब्रिटिश का पढ़ाया जाता था, उसमें कई बार जो किंग थे और जो चर्च थे, उनके बीच में टकराव रहा, पोप के बीच में टकराव रहा। लेकिन वह दायरा धार्मिक दायरा था। उसमें कानून नहीं था, लेकिन उन दोनों का कई बार टकराव हुआ-इतिहास इस बात का गवाह है। ऐसे टकराव जब कभी भी होते हैं, वे टकराव किसी के फायदे के लिए नहीं होते। मुझे खुशी है कि आज जो रेजोल्यूशन आप लाए हैं, इसने एक पिटारे को जन्म दिया है। सिर्फ यह नहीं है कि यह जो रेजोल्यूशन है, इस रेजोल्यूशन के साथ हमें और ताकत मिल जाए, इसके साथ-साथ हमें यह देखने का भी अख्तियार आज मिला है कि वहां काम कैसा हो रहा है? क्या वह सिस्टम ठीक है? क्या ऊपर से नीचे तक सब चीज़ सही है? क्या जिस बात के लिए उस इंस्टीटयूशन को बनाया गया था, वह सही काम कर रहा है या नहीं कर रहा। मुझे खुशी है कि आपने इसमें दोनों चीजें रखी हैं। कानून जो हम पास करते हैं, उसको गिराने का हक नहीं होना चाहिए। उस पर सुझाव देने का हक या उसको रिजेक्ट करने के हक के लिए भी

आपने कहा है कि सुप्रीम कोर्ट के सात जज होने चाहिएं और हाई कोर्ट के पांच होने चाहिएं। लेकिन वह कहां है, आज के समय में अगर आप ध्यान से देखें तो जो फंक्शनिंग आज की तारीख में है- रोज़ हमें पढ़ने को मिलता है- क्या एक सुप्रीम कोर्ट काफी है? क्या आम आदमी को वहां तक पहुंचने की सहूलियत है? क्या एक गरीब आदमी सुप्रीम कोर्ट में जा सकता है? क्या कन्याकुमारी में रहने वाला आदमी दिल्ली आकर सुप्रीम कोर्ट में अपना मुकदमा बगैर वकील के लड़ सकता है? क्या वह गरीब मज़दूर, जो पिस रहा है, किसी कोर्ट में जाकर इंसाफ ले पाता है? कितनी हाई कोर्ट्स हैं? आज़ादी मिले हुए पचास साल हो गए लेकिन उसके बाद आज एक सुप्रीम कोर्ट है। सर, मैं मांग रखना चाहता था और मैं किसी मौके की तलाश में था, आज आपने मौका दिया है। मेरे ख्याल से एक सुप्रीम कोर्ट से काम नहीं चलेगा, दो सुप्रीम कोर्ट होनी चाहिए। चाहे 6 महीने यहां लगाएं या 6 महीने कहीं साऊथ में लगाएं, लेकिन आम नागरिक को इतनी दूरी तय न करनी पड़े ताकि वह डर जाए कि मैं दिल्ली नहीं जा सकता, मुझे इंसाफ नहीं मिलेगा। दूसरी बात यह है कि बहुत सी स्टेटों की मांग है कि हाई कोर्ट की और बैंचेज़ खुलनी चाहिएं, वे बैंचेज़ अभी तक मंजूर नहीं हो पाई हैं। मुझे मालूम नहीं है कि उसमें सरकार कितनी मदद करेगी या सरकार को कितनी मदद करनी चाहिए या उसमें कोर्ट्स का कितना दखल है? इसी तरह से आप यूपी को ही ले लें, यूपी से बहुत पुरानी मांग रही है कि मेरठ या मुजफ्फरनगर की तरफ, कहीं पर शायद दो हाई कोर्ट्स हैं, उनसे उनका गुजारा नहीं होता है। उनको सैकड़ों किलोमीटर्स चलकर वहां पर आना पड़ता है और इसके लिए उनका काफी पैसा खर्च होता है, तो इसी तरह से और जगह की भी मांग होगी। इसके बाद जो लोअर कोर्ट्स हैं, इनके अंदर कितने केसेज पेंडिंग हैं? ये केसज बीस-बीस साल से पेंडिंग हैं, फिर कहां से इंसाफ मिलेगा? एक आदमी न्यायपालिका के पास यह कहने जाता है कि मुझे इंसाफ चाहिए, अगर वह इंसाफ उसको उस समय मिलता है, जिस समय उसको उसकी जरूरत नहीं होती है, तो फिर ऐसे इंसाफ का कोई फायदा नहीं है। आप पार्लियामेंट में, जूडिशियरी में और एग्जिक्यूटिव में बहस करें, बहस करने में कोई हर्ज नहीं है, लेकिन उसे छोटा-बड़ा बनाने की कोशिश न करें, क्योंकि जिस समय आप दूसरे के ऊपर आक्षेप करेंगे तो लोग आपके गिरेबान में भी देखेंगे। क्या कई बार फैसलों के साथ यह नहीं कहा जाता है कि फलां आदमी ने तो अपना फैसला ठीक करवा लिया है। क्या यह अच्छी बात है? क्या सिफारिश जरूरी है, मैंने तो बहुत बार देखा है और अखबारों में भी छपता है कि कई फैसले इतने कंट्रोवर्शियल होते हैं, जिनकी चर्चा की जा सकती है और जिन पर बहस की जा सकती है। हमें देखकर और सुनकर भी अच्छा नहीं लगता है, फिर यह फैसला कैसे हो जाता है? आज जब हम कोई कानून पास करते हैं, हम जनता के प्रतिनिधि कोई कानून पास करते हैं, तो किसी को आक्षेप करने का, बेनीयत गिराने का अख्तियार नहीं दिया जा सकता है। इसके साथ ही साथ आप यह भी देखें कि जो इनके कोर्ट्स हैं, आप हाई कोर्ट में चले जाएं,

लोअर कोर्ट में चले जाएं, यहां पर अभी सिब्बल साहब थे, लेकिन वे चले गए हैं, मुझे कहते हुए अच्छा नहीं लगता, आप देखिए, क्या हालत है? हमें बच्चा बड़ा अच्छा लगता है जब वह पढ़ाई करने के बाद वकालत करने जाता है। वह वकील बनने के लिए अपनी प्रैक्टिस शुरू करता है और उसके चार-पांच साल गुजारने के बाद, मां-बाप की भी एक आशा होती है कि मेरा बेटा वकील बनेगा। वह वकील बनकर केसेज करेगा तथा आगे नाम कमाएगा और परिवार का नाम आगे बढ़ाएगा। वह कुछ ऐसा करेगा कि उसका नाम अखबारों में आएगा, लेकिन जब वह सफर तय करके तीस हजारी तक जाता है, तो महोदय, आप कभी वहां जाकर हालात देखेंगे, तो आपको पता चलेगा। जब वह काला कोट पहनकर और सुबह तैयार होकर कोर्ट में जाता है, तो वहां जाकर एक पेड़ के नीचे एक स्टूल पर बैठता है। उसके पास पीने के लिए पानी तक नहीं होता है और न ही उसके पास कोई टेलीफोन होता है। मुझे समझ नहीं आता है कि आज से पहले कभी किसी कोर्ट ने वहां जाकर देखने की कोशिश क्यों नहीं की, कि जो लोग हमारे सामने पेश होते हैं, उनके हालात कैसे हैं? क्या आज हिन्दुस्तान में आजादी के पचास साल के बाद भी, हम उनको चेम्बर्स बनाकर नहीं दे सकते? क्या हम उनको एक अच्छा एन्वायरेंमेंट नहीं दे सकते? जो वकील किसी भी फरियादी के लिए इंसाफ की मांग करने के लिए कोर्ट में खड़ा होता है और जो उनकी कोर्ट का हिस्सा है, जो लोग आज सबसे ज्यादा अपनी ताकत दिखाने की कोशिश कर रहे हैं, उनसे कहो कि वे अपने घर में अपने नीचे के आदमी को सबसे पहले देखें। हम भी उस आम आदमी को देखते हैं, जो हमें अपना वोट देकर यहां पार्लियामेंट में भेजता है। उसे अख्तियार है, हमारे गिरेबान पकड़ने का, उसे अख्तियार है, हमारी बाजू पकड़ने का, उसको हक है पूछने का और वह हमसे पूछता है कि आप हमसे वोट लेकर गए थे, मेरे काम का क्या हुआ? आप पार्लियामेंट में जाकर क्या करते हो? कानून बनाते हो, हो गया काम, बना दिया कानून और गिर गया कानून, सड़कों पर आ गए। आज जरूरी है कि उन लोगों की तरफ भी देखा जाना चाहिए, जो उनका हिस्सा हैं और जो कहीं न कहीं परेशानी में हैं। उनके लिए एन्वायरेंमेंट अच्छा हो, जो कि लोगों की बड़ी उम्मीदों के साथ वहां जाते हैं। मुझे अच्छी तरह याद नहीं है, लेकिन मुझे जीवन में एक बार वहां पर जाने का मौका मिला। कोई पिटीशन का केस था, आप हालत देखिए, शायद उससे गंदा और खराब atmosphere नहीं हो सकता था। वहां जज साहब बैठे हैं, ऊपर एक पंखा लटक रहा है, मुझे लगा कि कहीं ऐसा न हो कि यह पंखा अभी गिर जाए और इनका सिर फूट जाए। आप वहां जाकर देखिए कि सफाई नहीं है, roads की हालत बहुत खराब है। तो क्या चीज अच्छी है? ऐसे खराब माहौल के अंदर क्या हम अच्छे फैसलों की उम्मीद कर सकते हैं? मैं समझता हूं कि आज जो चर्चा आपने शुरू की है, उसमें हमें इन चीजों पर गौर करना चाहिए।

उपसभापति जी, वकीलों की हड़ताल हुई, कितने दिन चली? हिंदुस्तान की पार्लियामेंट जहां है, हमारी कैपिटल, हमारी राजधानी और राजधानी में एक हड़ताल बदस्तूर शायद एक महीने या दो महीने तक चली। तब कहां सो गए थे सब, तब क्यों आंखें बंद थीं, तब नहीं दिखाई दिया कि आम आदमी कितना परेशान हो रहा है, अगर उसका वकील पेश नहीं होगा तो? इंसाफ मांगने वाला भी परेशान हुआ और दूसरा आदमी भी परेशान हुआ। तब सिर्फ इसलिए कि कोई एक जज उन वकीलों के खिलाफ था, उसने उनकी हड़ताल को टूटने नहीं दिया। वह झगड़ा बराबर चलता रहा। वह वकीलों और जजों का झगड़ा था, आम आदमी का उससे कोई मतलब नहीं था, लेकिन मैंने उस समय कहा था, भारद्वाज़ साहब यहां मौजूद थे, मैंने उनसे कहा था कि आपको दखल देना चाहिए ताकि वह हड़ताल जल्दी से जल्दी खत्म हो और इस तरह से इतनी लंबी हड़ताल न चले। मैं आपको हालात दिखाना चाहता हूं। जो रेजोल्यूशन आपने रखा है? उससे जुड़ी हुई ये कड़ियां, उन हालात को दर्शाती हैं कि अगर कोई ताकत लोकतंत्र के अंदर है, तो वह पार्लियामेंट को है, पार्लियामेंट के नुमाइंदों को है और वे ही इस देश को सही दिशा में ले जा सकते हैं, यह मेरा मानना है।

उपसभापति जी, बहुत कुछ हुआ, बहुत तकलीफ हुई, दिल को आघात पहुंचा, लेकिन यह सब क्यों हुआ? देश को चलाना हमारा काम है, हम किसके लिए क्या कानून बनाते हैं, यह देखना हमारा काम है, लेकिन पिछले 6 महीने, साल भर में जो कुछ हुआ, उससे हमें तकलीफ हुई है। मुझे पता नहीं यह कहां तक सही है, मैंने थोड़ी-बहुत कोशिश की थी छांटने की, हमारे सीनियर वकील साहब यहां बैठे हुए हैं, तमिलनाडु में एक फैसला आया जिसमें सुप्रीम कोर्ट ने यह फैसला किया कि फैसला करते समय आप लोगों की भावनाओं को भी जरूर देखें-voice of the people इसे हाईकोर्ट ने रिजेक्ट किया था, स्टेट असेंबली ने कोई रेजोल्यूशन पास किया, वह फिर हाईकोर्ट में गया, हाईकोर्ट ने उसे मानने से मना कर दिया, लेकिन सुप्रीम कोर्ट ने यह कहा कि लोगों की क्या इच्छा है, यह देखना और उस फैसले में जाहिर करना ठीक होगा। तो आज क्या हुआ दिल्ली में? लोग सड़क पर आ गए हैं, बेघर हुए हैं, उनके मकान टूटे, दूकानें सील हुईं, फरियाद हुई, लोग चीखे-चिल्लाए, नुमाइंदे भागे, पार्लियामेंट में आए, पार्लियामेंट ने एक रेजोल्यूशन पास किया और कहा कि नहीं, हमें साल भर का समय चाहिए, हम साल भर में चीजों को ठीक करेंगे। मास्टर प्लान है, मास्टर प्लान क्या हम एक दिन में बनाकर कोर्ट में दे दें? 2021 का मास्टर प्लान, हर बार, हर तारीख में यह कहा जाता है कि आप कोर्ट में मास्टर प्लान दे दें, दे देंगे मास्टर प्लान। मास्टर प्लान क्या कोई छोटा डाक्यूमेंट है? दिल्ली कैसी होगी, सारी दुनिया में आज क्या दौड़ है, किस तरह की capitals बन रहीं हैं, किस तरह के शहर बन रहे हैं, उसको देखते हुए मास्टर प्लान बनेगा और शायद 40 साल पहले के मास्टर प्लान में और आज के मास्टर प्लान में बहुत फर्क होगा। मेरी समझ में नहीं आया कि हम क्या चाहते हैं और किस दिशा में चीज जा रही है? हर फैसले में, हर दो दिनों के बाद

यही कहा गया कि सील कर दो-दुकानें सील कर दो, मकान तोड़ दो, कहां जाएंगे लोग? जिसकी दुकान बंद होती है, उसके घर में रोटी नहीं है, वह बच्चों को लेकर भूखा मरेगा। किसान लोग महाराष्ट्र में आत्महत्या कर रहे हैं, दिल्ली में व्यापारी रो रहे हैं। एक परिवार नहीं मरता बीवी-बच्चे हैं, बुढ़े मां-बाप हैं, बच्चों की फीस है, रोज का खर्चा है, दुकान बंद हो जाती है, पीछे वाला माल देना बंद कर देता है, आगे वाला जिस पर उधार है, वह अपना उधार नहीं चुकाता है, कहां जाए वह? वे कहां जाएं? हम तो कुछ भी नहीं दे रहे हैं, हम तो सिर्फ सांत्वना दे रहे हैं। हम तो यह चाहते हैं कि यह बसे, यह हमारी दिल्ली है, हम इन्हें बसाना चाहते हैं। लेकिन फैसला करने वालों पर कोई फर्क नहीं पड़ता है। फर्क हम पर पड़ता है। फर्क उन पर पड़ता है, जो उनके पास वोट लेने जाते हैं; फर्क उन पर पड़ता है, जिनकी इस देश में जिम्मेदारी है कि लोग भूखे न सोएं, फर्क उन पर पड़ता है, जिन्होंने लोगों से वादा किया है कि हम रोटी, कपड़ा और मकान देंगे। आपने बेरोजगारी दूर करने का वादा किया है। आपने सरकार बनाई है, सरकार किसी की हो, लेकिन ये इंस्टीट्यूशंस इसलिए बनी हैं, इनमें लोगों की आस्था इसलिए है कि उन्हें मालूम है कि अगर हम पर कोई ज्यादती होगी, यहां पर कोई आपदा आएगी, तो पार्लियामेंट है, हमारा प्रधान मंत्री है? हमारा राष्ट्रपति है, वे हमें पनाह देंगे। हर कानून का ऐसा भद्दा मजाक, मेरा मतलब न्यायपालिका के खिलाफ बोलना नहीं है, लेकिन उन्होंने जो काम किया है, हर फैसले की चर्चा करना हमारा हक है। लोअर कोर्ट के फैसले को हाई कोर्ट में लोग मुखालिफत करके पेश करते हैं, हाई कोर्ट के फैसले को सुप्रीम कोर्ट में उसकी मुखालिफत करके पेश करते हैं, तभी न्याय मांगते हैं। आज हमारे साथ वही बात है कि अगर हमने इन चीजों को मान लिया, तो यही कानून बन जाएगा। हमारे यहां कारपोरेशन है, एनडीएमसी है, असेम्बली है, पार्लियामेंट है--नहीं, ये सब बेकार हैं और एक एक्स्ट्रा कंस्टीट्यूशनल अथॉरिटी, हमारे बनाए हुए 4 या 6 आदमी, ये तय करेंगे कि दिल्ली में क्या होना चाहिए। सर, यह क्या चीज़ है? क्या इसे सही माना जाएगा? वे लोग, जिन्होंने आज तक कभी जनता के बीच जा कर एक बार भी हाथ नहीं जोड़ा हो, कभी वोट नहीं मांगे हों, वे लोगों का क्या फैसला करेंगे और वे होते कौन हैं? उन्होंने कभी वोट दिया भी नहीं होगा। सारी जिन्दगी बड़े-बड़े एयर कंडीशंड कमरों में बैठे रहे और आज हम उनको कह दें या कोर्ट उनको कह दे कि ये हमारा फैसला करेंगे, तो यह ठीक नहीं है।

सर, मैं एक और बात नहीं समझा। फैसला ऐसा होता है, जो लोगों के दिल को छुए कि यह फैसला बड़ा अच्छा फैसला हुआ, लोगों के हक में फैसला हुआ है। सर, मुझे नहीं मालूम कि कौन-सा ऐसा आर्टिकल है या कौन-सा ऐसा कानून है, जिसमें अगर कोई आदमी कत्ल करता है, तो कोर्ट कहती है कि इसे फांसी की सजा दे दो या अगर विटनेस में कुछ कमी या बढ़ोतरी होने से फांसी की सजा में कुछ कमी करनी पड़ती है, तो उसे आजीवन कारावास दे देते हैं, लेकिन कोर्ट को उस मुलजिम को समय देकर माफी मांगने के लिए कहने का कोई हक नहीं है। वकील साहब यहां बैठे हैं। मेरे ख्याल से कानून की किसी किताब में नहीं लिखा है कि किसी जज को यह अख्तियार

दे दिया जाए कि वह उस मुलजिम को यह कहे कि तुम 6 महीने का समय मांग लो, मैं तुम्हें 6 महीने के लिए माफ करता हूं। सर, दिल्ली में क्या हुआ? एक फैसला आया कि जिनकी दुकानें सील होनी हैं उनसे कहो कि वे अपने एफीडेविट दें, हम इन्हें 3 महीने का टाइम देते हैं। अगर वे गलत थे, तो उनकी दुकानें तोड़ देनी चाहिए थीं, सील कर देनी चाहिये थीं। अगर उन्होंने ज्यादती की थी-हालांकि नहीं है-उनके पास रजिस्ट्रियां हैं, उनके पास लाइसेंस हैं, टेलीफोन हैं, वे पैसा देते हैं, उनके कमर्शियल लाइसेंस बने हुए हैं, उसके बावजूद अगर कोर्ट समझती है, तो कोर्ट को यह अख्तियार किसने दे दिया कि हम आपको 3 महीने के लिए छूट देते हैं, आपके पास 3 महीने तक की मोहलत है? अगर गलत है, तो तोड़ दो और अगर गलत नहीं है, तो उन्हें छोड़ दो। आपने सरकार कैसे चला ली, आप पार्लियामेंट का काम कब से करने लगे? हमें दिल्ली बसानी है, हम चाहते हैं कि दिल्ली में हमारे जो मार्केट्स हैं, वे कैसे हों। पहले हम लोग फैशन देखने बाहर जाते थे, अब पेरिस और इटली वाले उस फैशन को देखने दिल्ली में एमजी रोड पर स्थित उस पहले कम्प्लेक्स में आते थे और वहां से फैशन पैदा होता था, जो दुनिया में जाता था। वह बिल्डिंग तोड़ दी। 13 बिल्डिंग्स में से 2 बिल्डिंग्स तोड़ दी और बाकी छोड़ दी। यह कौन-सा कानून है? किसने उनको यह अख्तियार दे दिया? उन्होंने कैसे किया? आज यही मैं दिखाना चाहता हूं। आज हमें अगर इनके फैसलों पर शक होता है, मन में दुविधा होती है, तो ये फैसले कचोटते हैं, दिल को चोट पहुंचाते हैं और ऐसे फैसले कभी भी अच्छे नहीं होते।

सर, अभी पब्लिक इंटरेस्ट लिटिगेशन की बात कही गई। मैं जानना चाहता हूं कि जो कुछ दिल्ली में हुआ और मैंने कई ऐसे फैसले देखे कि जज साहब ने कहा कि हम वह फलां केस सुओमोटो ले रहे हैं, फार्म हाउसेज़ बंद कर दो। वे 80 फीट की सड़क पर होंगे या 20 फीट की सड़क पर होंगे, फीता लेकर नापने बैठ गए कि इस जगह से इतनी दूरी होगी, तब फॉर्म हाउस चलेगा। सर, मैं जानना चाहता हूं कि उन्होंने अपने आप जो विषय कोर्ट के अंदर लिए हैं, उन में से क्या एक भी केस आप ने किसानों की हत्या का कोर्ट में मंगाया? मैं जानना चाहता हूं कि मजदूर जो पिसते रहते हैं, उन में से कुछ यूनियन से जुड़े हुए हैं? कुछ नहीं जुड़े हुए हैं, क्या आज तक किसी कोर्ट ने यह मालूम किया कि इनका जो पे कमीशन बनना चाहिए, वह क्यों नहीं बना? उनके क्या हालात हैं और आजाद भारत में जो उन्हें कायदे-कानून के मुताबिक दिया जाना चाहिए, वह सब उनको मिल रहा है? क्या यह कभी किसी कोर्ट ने पूछा? मैं जानना चाहता हूं कि जो basic education से जुड़ी हुई बातें हैं, क्या उनके बारे में कभी किसी कोर्ट ने उन्हें किसी सरकार से मंगाकर पूछा? यह तो मालूम कर लिया कि कॉर्पोरेशन सड़क पर ठीक से झाड़ू नहीं लगा रही, एक slaughter house बनना था, तो वहां अपना administrator बैठा दिया, लेकिन कभी हॉस्पिटल के बारे में पूछा कि क्या वहां लोगों को बुनियादी दवाएं मिल रही हैं? क्या उन को एक हॉस्पिटल में जो सुविधाएं मिलनी चाहिएं, वे मिल रही हैं या नहीं मिल रही हैं? क्या environment के बारे में उन्होंने जानने की कोशिश की?

इस तरह की बहुत सारी बातें कही जा सकती हैं। वे कुछ ही क्यों चुनते हैं? एक विषय चुन लिया क्योंकि उन को सूट करता है।

तो आज यह छोटा बड़ा करने की कोशिश दिखायी नहीं जा रही, दिख रही है। वह चले गए जो बहुत जोर से कह रहे थे कि हमें टकराव नहीं पैदा करना चाहिए। हम टकराव पैदा नहीं कर रहे, टकराव पैदा करने की शायद हमारे resolution में नीयत भी नहीं है। हम तो आदर करते हैं, हम सम्मान करते हैं, ये हमारी इंस्टीटयूशंस हैं। हमारे फैसलों, हमारे कायदे-कानून से बनी हुई इंस्टीटयूशंस हैं, हम उन्हें छोटा कर के बड़े नहीं हो सकते, लेकिन हमारे फैसले, लोगों के दिल को छूने वाले फैसले अगर कहीं किसी जगह रुक जाते हैं तो हमें उस से तकलीफ होती है। मैं आशा करता हूं कि हिंदुस्तान-हिंदू, मुसलमान, सिख, ईसाई, सब का एक अच्छा गुलदस्ता है और अगर ऐसे हालात पैदा होंगे तो पता नहीं ये कितनी दूर तक असर करेंगे और उन से कितनी चोट पहुंचेगी? हम विश्वास करते हैं कि अगर लोगों का विश्वास टूटता है तो उस से किसी का कोई फायदा नहीं होता। अगर हमारा सिस्टम ही बिगड़ जाएगा तो हमारा देश कैसे रहेगा? अगर एक आदमी कहीं गुनाह करता है या गलत काम करता है तो लोग कहते हैं कि यह गंदा आदमी है। इतिहास उसे माफ नहीं करता। उस के चरित्र को 50-100 साल बाद लोग विश्लेषण करते हैं। इसलिए अगर आज हम कमजोर हो जाएंगे तो आगे 50 साल बाद आने वाले लोग यह कहेंगे कि उस समय का लोकतंत्र कमजोर था, उस समय की पार्लियामेंट के मेंबर कमजोर थे, वे उस समय अपना रास्ता नहीं चुन सके, उन्हें यह नहीं मालूम था कि कौन सी दिशा है, उन्हें अपनी ताकत का एहसास नहीं था। यह मैं आज कहना चाहता हूं। इसलिए मैं श्री नायक के रिजोल्यूशन का पूरा-पूरा और पुरजोर समर्थन करता हूं। ऐसे रिजोल्यूशन ही हमें जिंदा करेंगे, ऐसे रिजोल्यूशन हमें ताकत दिखाएंगे, रास्ता दिखाएंगे और रोशनी दिखाएंगे। धन्यवाद, जय हिंद।

श्री उपसभापति: श्री जयन्ती लाल बरोट।

श्री जयन्ती लाल बरोट (गुजरात) : मननीय उपसभापति जी, मैं आप का आभारी हूं कि आप ने मुझे इस विषय पर बोलने का मौका दिया। भाई शान्ताराम लक्ष्मण नायक जी जो संकल्प लेकर आए हैं, मैं मानता हूं कि जिस आदमी को न्यायपालिका में विश्वास है, उस में चाहे एक आदमी न्याय करे या पांच आदमी न्याय करें या ज्यादा आदमी न्याय करें, उस से कोई फर्क नहीं पड़ता है। न्याय किसे, किस तरह का देना, उसे सुप्रीम कोर्ट के विद्वान न्यायमूर्ति तय करते हैं और कितने आदमियों की बेंच बिठाना है, यह भी वे तय करते हैं। उस का आधार यह होता है कि केस किस प्रकार का होता है, लेकिन हम यह प्रस्ताव लेकर आए हैं कि कम-से-कम पांच या सात न्यायमूर्ति बैठकर तय करें तो मैं मानता हूं कि सुप्रीम कोर्ट से संसद बड़ी है, ऐसा सोचने वालों के दिमाग में

यह बात होती है कि हम जो तय करते हैं, उसे सुप्रीम कोर्ट deny न करे। इसलिए इस तरह के अलग-अलग तरीके ढूंढे जाते हैं।

संसद में बहुमत के आधार पर कोई नियम या कोई बात तय करते हैं, तो जिस पर असर होगा, वह कहां जाएगा? उसको सुप्रीम कोर्ट में जाना पड़ेगा। जब न्याय लेना है, तो वह सुप्रीम कोर्ट में जाएगा। अगर सुप्रीम कोर्ट ने बहुमत के आधार पर कोई निर्णय लिया है या किसी रूल से कुछ तय किया है, तो उसको सुधारने के लिए वह कोशिश करेगा, उसमें कोई गलत चीज नहीं है। इसलिए ये जो विधेयक लेकर आए हैं, मैं उसका विरोध करता हूं। मैं कहता हूं कि अगर बहुमत के आधार पर कोई सरकार गिरायी जाएगी, तो गिराए जाने के बाद वह सरकार कहां जाएंगी, वह सुप्रीम कोर्ट में जाएगी। सुप्रीम कोर्ट में जाने के बाद पांच, सात, नौ या ग्यारह लोगों के बेंच के आधार पर सुनवाई होने के बाद वह तय होता है। आप जानते हैं कि अभी झारखंड की सरकार को गिराया गया था। तीन-चार साल के बाद उसका निर्णय आया कि उसे गलत तरीके से गिराया गया था, उसे सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया। ठीक है कि चुनाव हो गए थे और वहां फिर से सरकार भी बन गई थी, लेकिन केन्द्र सरकार ने जो निर्णय तय किया था, वह गलत था। ऐसी चीज को लेकर कहीं जाने के लिए सुप्रीम कोर्ट ही एक आधार है। कोई आदमी अपनी बात को लेकर, भले ही वह बहुमत के आधार पर लिया गया निर्णय हो, उसके बारे में कहां पर जाकर अपनी बात कहे, तो वह एक ही जगह है।

दूसरी बात यह है कि शाहबानो के केस के बारे में आप जानते हैं। आपने सुना ही होगा कि जब शाहबानो के केस पर सुप्रीम कोर्ट ने अपना निर्णय दिया, तो संसद के कानून को चेंज कर दिया। जब एक आदमी की बात पर सुप्रीम कोर्ट ने न्याय दिया, तो एक समाज के तुष्टिकरण के लिए पूरा कानून चेंज करने का बहुमत के आधार पर निर्णय लिया गया। मैं मानता हूं कि न्याय एक आदमी को मिले या पूरे समाज को मिले, लेकिन न्याय तो न्याय होता है। न्याय देने वाला आदमी होता है और हर तरीके से, हर बाजुओं से तलाश करके वह न्याय देता है। इसलिए एक बाजू से देखने से दूसरे लोगों के साथ अन्याय होता है, वैसा मानने की जरूरत नहीं है। मैं मानता हूं कि न्यायपालिका में बैठे हुए लोग सभी तरीके से, सभी बाजुओं से सुनते हैं और आगे-पीछे की बात देखने के बाद निर्णय करते हैं। आप जानते हैं कि इमरजेंसी जब आई, उसके पहले हाई कोर्ट ने एक निर्णय किया, तो हमारे उस टाईम के जो प्रधान मंत्री जी थे, उन्होंने इमरजेंसी लगा दी। इमरजेंसी के समय में भी सुप्रीम कोर्ट ने कई ऐसे निर्णय दिए थे, कि बहुमत के आधार पर लिए हुए निर्णय गलत थे। इसी तरह मैं मानता हूं कि कितनी भी इमरजेंसी हो, कितना भी कुछ हो, लेकिन संसद के बिल्कुल समान अधिकार के आधार पर, संसद के निर्णय को रोकने-टोकने के लिए सुप्रीम कोर्ट को जो पावर्स हमारी संविधान सभा ने दिये हैं, वह सही दिये हैं और सुप्रीम कोर्ट के जो पावर्स हैं, वे सही हैं। सुप्रीम कोर्ट में कितने जजों को बैठना है, वह तय करने का अधिकार न्यायमूर्तियों को है और वह वे तय करते हैं। इसलिए मैं मानता हूं कि इस तरह का किसी भी प्रकार का रोक-टोक डालना सही नहीं है।

नहीं है। अपने कंस्टीट्युशन को सुधारने के लिए भी कई चीजें ऐसी आती हैं, जिनको यहां विपक्ष की ओर से रोका जाता है, लेकिन बहुमत के आधार पर तय हो जाता है। उसी तरह हमारे विद्वान भाई गरीब की बात बोल रहे थे, तो वह सच बात है। इस देश में गरीब को न्याय मिलना चाहिए, लेकिन गरीब को न्याय देने के लिए सिर्फ एक ही साइड से नहीं, लेकिन बाकी सभी क्षेत्रों में उनको न्याय मिले, इस तरह की व्यवस्था होनी चाहिए। विधान सभा हो, लोक सभा हो या राज्य सभा हो, अगर किसी भी आदमी को न्याय दिलवाना है, अगर उसको सुखी बनाना है, तो उसको सभी क्षेत्रों से न्याय मिले, इस तरह से सभी जरूरी कायदों में फेर-बदल करनी चाहिए। बाकी एक आधार पर यह पांच, सात या नौ जज तय करें या अपने संसद ने जो रूल्स बनाए हैं या जो कायदे बनाए हैं, उसको सुप्रीम कोर्ट नहीं रोके-टोके, यह बात सही नहीं है। इसलिए मैं मानता हूं कि सुप्रीम कोर्ट की पावर्स हमारी संसद के सरीखे हैं। न्यायपालिका जिस तरह से काम करती है, वह सही करती है। इसलिए इस संबंध में जो उनका सुझाव आया हुआ है, मैं उसका विरोध करता हूं। धन्यवाद।

श्री मंगनी लाल मंडल: माननीय उपसभापति महोदय, आपका धन्यवाद। श्री शांताराम लक्ष्मण नायक जी का जो प्रस्ताव है, मैं उसका समर्थन करता हूं। माननीय सदस्यों ने अपनी राय रखी है। न्यायपालिका की भूमिका के बारे में जो चर्चा होनी चाहिए थी, वह चर्चा नहीं हुई है। मैं भारतीय जनता पार्टी का दृष्टिकोण समझ रहा हूं। जहां-जहां सामाजिक दृष्टिकोण आता है, वहां-वहां न्यायपालिका जाकर अटक जाती है, उसके बारे में निश्चित रूप से भारतीय जनता पार्टी, श्री नायक जी और हमारे दृष्किोण में अंतर है। महोदय, मैं अपनी बात कहूं, उससे पहले एक बात कहना चाहूंगा कि देश में एक बात की बहुत जोरों से चर्चा चल रही है और प्रधानमंत्री जी ने स्वयं कई बार कहा है कि चीनी मॉडल के आधार पर हम विकास करेंगे, तरक्की करेंगे। चीन में सांस्कतिक क्रांति हुई थी, हम सब लोग जानते हैं और सांस्कृतिक क्रांति का रास्ता अलग-अलग हो सकता है। क्योंकि चीन में लाल सेना ने वहां सांस्कृतिक क्रांति की थी। हमारे देश में भी सांस्कृतिक क्रांति हो रही है, लेकिन इसमें लाल सेना की भूमिका नहीं है। इसमें भूमिका है लोकतंत्र की। चीन में जो व्यवस्था बन गई है, उसमें जो सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े समूह थे, वर्ग थे, आज उसमें कोई विविधता नजर नहीं आती है, जिस तरह की एक समतामूलक समाज की स्थापना चीन में हो गई है। श्री जय प्रकाश अग्रवाल जी ने चर्चा की इंग्लैंड की और कहा कि इंग्लैंड में कोर्ट और चर्च के बीच में विवाद था। उन्होंने यह भी कहा कि अनावश्यक था फिर भी प्रिवेल कौन करेगा, यह बहुत दिनों तक चला। हमने लोकतंत्र वहां से लिया है, यह कहते हैं कि हमने उधार लिया है ब्रिटिश से लोकतंत्र को, लेकिन हमने एक चीज सबसे ज्यादा की कि हमने राष्ट्रपति शासन प्रणाली न लाकर हमने संसदीय प्रणाली ली और यह इसलिए ली कि इंग्लैंड में वर्ण व्यवस्था नहीं रही, तो लड़ाई हुई चर्च में और कोर्ट में, लेकिन हमारे यहां वर्ण व्यवस्था रही है और वर्ण व्यवस्था में शोषण का कटघरा हर

स्तर पर मौजूद रहा है। उस कटघरे को तोड़ने का प्रयास आजादी के आंदोलन में महात्मा गांधी के नेतृत्व में हुआ, डा॰ बाबा साहब अम्बेडकर ने भी आवाज उठाई और आजादी के बाद जो संरक्षण मिला संविधान के माध्यम से जो आरक्षण मिला संविधान के माध्यम से, उस संरक्षण और आरक्षण, दोनों के माध्यम से जो वर्ग के लोग रहे हैं अनुसूचित जाति के लोग रहे हैं, अनुसूचित जनजाति के लोग रहे हैं, उनको इस सभा में, लोक सभा में, राज्य सभा में, संसद में और विधान मंडल में जाने का मौका मिला। सत्ता और शासन में हिस्सेदारी की यह सांस्कृतिक क्रांति है। यह जो सांस्कृतिक क्रांति, अधिकार की लड़ाई हो रही है लोकतांत्रिक प्रक्रिया के माध्यम से, उस पर आज कहीं अगर सबसे ज्यादा प्रहार हो रहा है, तो वह प्रहार न्यायपालिका के माध्यम से हो रहा है। न्यायपालिका की बहुत सारी चीजों से मैं सहमत हूं। संविधान का जिन्होंने निर्माण किया, उन्होंने शक्ति संतुलन की परिभाषा स्पष्ट रूप से की कि कोई किसी के अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं करेगा, लेकिन सार्वभौम कौन है, यह फैसला अभी तक नहीं हुआ। संविधान में लिखा है, जिस संविधान को हमने अंगीकृत किया है, उसमें कहा गया है कि देश का जो आवाम है, देश की जो जनता है, देश के जो पीपल हैं, वे सार्वभौम हैं, सोवरेन हैं और जनता के गर्भ से समय-समय पर, लोकतांत्रिक प्रक्रिया के माध्यम से लोक सभा का गठन होता है, विधान मंडलों का गठन होता है। संविधान की व्याख्या करने का अधिकार जिसको दिया गया है, उस सुप्रीम कोर्ट का गठन जनता के गर्भ से नहीं होता है, उसका स्वरूप नहीं बदलता है, जो सामाजिक चरित्र है हमारा, जिसमें शोषण है, जिसमें हीन भावना है, जिसमें दासता का अवशेष है, उसको समाप्त करने की प्रक्रिया लोकतंत्र में है और समय-समय पर जब चुनाव होता है और लोकतांत्रिक व्यवस्था के अंतर्गत पार्लियामेंट का करेक्टर सामने आता है, तो ऐसा आभास होता है कि सांस्कृतिक क्रांति देश में हो रही है। मैंने पहले ही कहा कि लाल सेना के माध्यम से नहीं, जो हमें वोट का अधिकार मिला है, उसके माध्यम से, लेकिन जिस संविधान में संरक्षण और आरक्षण की व्यवस्था है, न्याय पालिका समय-समय पर आज इसक मार्ग में अवरोधक पैदा ...(व्यवधान)...

श्री उपसभापति: मंगनी लाल जी, अभी पांच बज गए हैं। नैक्स्ट टाइम, जब रैजोल्यूशन कंटीन्यू होगा, तब आप कंटीन्यू करेंगे। The House stands adjourned to meet ...(*Interruptions*)...

SHRI K. CHANDRAN PILLAI (Kerala): Sir, I want to make a point. After getting your ruling, I will abide by that. ...(*Interruptions*)... Mr. Deputy Chairman, Sir, I want to make a point. After getting your ruling, I will abide by that. ....(*Interruptions*)... Sir, my Resolution is regarding petroleum ...(*Interruptions*)... Sir, it is at No. 1 ...(*Interruptions*)... Sir, I want to make a point. After getting your ruling, I will abide by that. ...(*Interruptions*)...

MR. DEPUTY CHAIRMAN: What is that?

SHRI K. CHANDRAN PILLAI: Sir, my Resolution is at No. 1. Procedurally, everything is okay. What I am suggesting is, allow me to put it. We can carry it forward.

MR. DEPUTY CHAIRMAN: No. This Resolution has to be completed, then only you can put yours ...(*Interruptions*)...

SHRI K. CHANDRAN PILLAI: Will this be carried over next day? That is the clarification. If it is okay, then there is no point.

MR. DEPUTY CHAIRMAN: That will lapse. That is the rule.

SHRI K. CHANDRAN PILLAI: Sir, I abide by the rule. Procedurally, things are okay, but is it ...(*Interruptions*)...

MR. DEPUTY CHAIRMAN: The House stands adjourned to meet on Monday, 4th December 2006, at 11.00 a.m.

The House then adjourned at two minutes past five of the clock till eleven of the clock on Monday, the 4th December, 2006.

MGIPMRND—3677RS—31-12-2007.